कुरुक्षेत्र

दिसम्बर, 1991 तीन रुपये

○ सार्वजनिक वितरण प्रणाली

○ पेयजल

आदिवासी क्षेत्र में कुआं

वर्ष-37, अंक 2 अग्रहायण-पौष शक 1913

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास मंत्रालय का प्रमुख मासिक

'कुरुक्षेत्र' के लिए मौलिक लेख, कहानी, एकांकी, कविता, संस्मरण, हास्य-व्यंग्य चित्र आदि भेजिए। अस्वीकृत रचनाओं की वापसी के लिए टिकट लगा व पता लिखा लिफाफा साथ आना आवश्यक है।

'कुरुक्षेत्र' की एजेन्सी लेने, ग्राहक बनने, पता बदलने व अंक न मिलने की शिकायत, व्यापार व्यवस्थापक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 में कीजिए।

आवरण पृष्ठों की
साज सज्जा : **एम. एम. मलिक**
चित्र : **फोटो विभाग एवं**
रमेश कुमार ग्रामीण विकास मंत्रालय
एक प्रति : 3.00 रु. वार्षिक चन्दा : 30 रु.

सार्वजनिक वितरण प्रणाली प्रबन्ध में सुधार आवश्यक 2
चन्द्रशेखर मिश्रा
गांव-गांव में राशन दुकान योजना 6
कु. विध्या गुप्ता
ग्रामीण पेयजल व्यवस्था का मूल्यांकन 7
डा. अजय जोशी
ग्रामीण क्षेत्रों में पेयजल समस्या 9
ममता
'चन्दो' 12
विमला रस्तोगी
पर्यावरणीय प्रदूषण 15
आर.बी. सिंह तोमर
पर्यावरण एवं जल प्रदूषण 21
अनिता अग्रवाल
संत-पुरुष-डा. राजेन्द्र प्रसाद 23
रामजी प्रसाद सिंह
श्रम एवं श्रमिक कल्याण 25
मंजू पाठक
ग्रामीण अर्थव्यवस्था को नया रूप देने की आवश्यकता 27
शरबेन्दु
जन-जन तक पहुंचेगा जल 31
कुलदीप शर्मा
भूमि सुधार कार्यक्रम में पंचायत की भूमिका 35
डा. घनश्याम सिंह चौहान
खाद्यान्न समस्या का समाधान 37
नेपाल सिंह
कितना प्रदूषित है हमारा पेयजल ? 39
अंकुश्री
जल ही जीवन है 41
डा. विनोद गुप्ता
ग्रामीण आर्थिक-सामाजिक : विकास एक सिंहावलोकन 43
डा. जगबीर कौशिक
राजस्थान में सूखा और अकाल की समस्या व समाधान 47
प्रो. पी. सी. मीना

प्रकाशित लेखों में अभिव्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं तथा यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी यही हो।

सम्पादकीय पत्र व्यवहार : सम्पादक, कुरुक्षेत्र (हिन्दी), ग्रामीण विकास मंत्रालय, 467, कृषि भवन, नई दिल्ली के पते पर करें। दूरभाष : 384888

सार्वजनिक वितरण प्रणाली प्रबन्धन में सुधार आवश्यक

चन्द्रशेखर मिश्रा

ग्रामीण समुदाय को विशेषकर सुदूर दुर्गम एवं पहाड़ी क्षेत्रों में रहनेवाले लोगों को उपभोक्ता वस्तुओं विशेषकर अनिवार्य वस्तुओं यथा खाद्यान्न,चीनी, खाद्य तेल, मिट्टी तेल, नमक, नियंत्रित कपड़े की आपूर्ति की आवश्यकता को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। प्रधानमंत्रीजी ने इस वर्ष स्वतंत्रता दिवस के अवसर पर अन्य महत्वपूर्ण विषयों के साथ सार्वजनिक वितरण प्रणाली पर भी अपने विचार रखे। उन्होनें कहा कि सरकार इस व्यवस्था को देश के दूर-दराज एवं आदिवासी गाँवों तक जिनकी जनसंख्या1000 से1500 तक है ले जायेगी व व्यवस्था में आवश्यक सुधार हेतु शीघ्र निर्णय लेगी। बढ़ती कीमतों से उत्पन्न हो रही कठिनाइयों एवं करोड़ों गरीब तथा निश्चित आयवाले परिवारों के लिए सार्वजनिक वितरण प्रणाली का महत्व राष्ट्रीय स्तर का है। इस अत्यंत बुनियादी एवं कल्याणकारी कार्यक्रम की सिफारिश वर्ष1950 में सरकार द्वारा गठित खाद्यान्न समिति ने की थी। समिति ने स्थिति अध्ययन पश्चात यह सिफारिश की थी कि सारे देश में सार्वजनिक वितरण प्रणाली की नीति लागू की जाय चाहे नियंत्रण रहे या ना रहे। नियंत्रण चाहे पूर्ण हो या आंशिक हो। सरकार के इस महत्वपूर्ण निर्णय से देश भर में सार्वजनिक वितरण प्रणाली व्यवस्था प्रारम्भ हुई।

वर्तमान स्थिति :-

सार्वजनिक वितरण प्रणाली में उचित मूल्य की दुकानों के माध्यम से अत्यावश्यक उपभोक्ता वस्तुओं के वितरण की परिकल्पना की गयी है। सार्वजनिक वितरण प्रणाली का प्रमुख उद्देश्य उपभोक्ताओं को विशेष रूप से समाज के कमजोर वर्गों को अनिवार्य वस्तुएँ समय पर उपलब्ध कराना है। इसके द्वारा खुले बाजार में अनाज की कीमतों पर कुछ हद तक अंकुश लगा रहता है। नागरिक आपूर्ति बुनियादी रूप से राज्य सरकार के अधिकार क्षेत्र में आता है। केन्द्रीय सरकार राज्य सरकारों से यह अपेक्षा करती है की जहाँ आवश्यक हो दुकाने खोलें/विस्तार करें तथा उचित ढंग से संचालन, पर्यवेक्षण व उनकी कार्यप्रणाली पर आवश्यक नियंत्रण रखें जिससे उद्देश्यों की पूर्त्ति हो सके। राज्य सरकारों को यह स्वतंत्रता भी प्राप्त है कि वे स्थानीय रूप से जिस किसी अत्यावश्यक वस्तु की उगाही/उपलब्धता कर सकते हैं, उसे इस प्रणाली के अंतर्गत शामिल कर सकते हैं।

देश में ग्रामों की संख्या लगभग6 लाख है।70 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या गाँव में निवास करती है। वर्ष1989 के अन्त में ग्रामीण क्षेत्र के लोगों को अनिवार्य उपभोक्ता वस्तुएँ वितरण हेतु सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अन्तर्गत2,41,671 उचित दर की दुकाने कार्यरत थीं। इन दुकानों का संचालन किसी व्यक्ति के निजी स्वामित्व में ग्रामीण सहकारी संस्थाओं के द्वारा किया जाता है। ग्रामीण क्षेत्र में कार्यरत उचित दर की कुल दुकानों 72 प्रतिशत निजी स्वामित्व में कार्यरत हैं। बहुधा यह देखने में आया है व सामान्य नागरिकों की यह शिकायत है कि सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अन्तर्गत ग्रामीण क्षेत्र में कार्यरत निजी स्वामित्व की उचित दर की दुकानों पर पहुँचने वाला गेहूँ, चावल, चीनी, मिट्टी का तेल तथा अन्य सामग्री ऐसे50 प्रतिशत परिवारों को भी नही मिल पाती है जिनके नाम से यह भेजा जाता है। दुकानों में धांधली (मिलावट) खुले बाजारों में वस्तुओं की बिक्री आम बात है।

ग्राम सहकारिता की हिस्सेदारी

देश के अधिकांश गाँवों को 95 हजार से अधिक ग्रामीण साख सहकारी समितियों (पैक्स, लैम्पस, एफ०एस०एस०) के अन्तर्गत शामिल कर लिया गया है। इन ग्रामीण समितियों से कृषि उपज का विपणन एवं ग्रामीणों को उपभोक्ता वस्तुओं के वितरण कार्य करने की अपेक्षा की जाती है। अर्द्धशहरी क्षेत्रों में3000 प्राइमरी को-आपरेटिव मार्केटिंग सोसाइटीज कार्यरत हैं जिनमें से60 प्रतिशत समितियाँ ग्रामीण क्षेत्रों में उपभोक्ता एवं आवश्यक वस्तुओं के वितरण कार्य में लगी हुई हैं।

वर्ष1989 में ग्रामीण क्षेत्रों में सार्वजनिक वितरण प्रणाली अन्तर्गत (एफ०पी०एस०) कुल2,41,671 उचित दर की दुकानें कार्यरत थीं। इनमें से64,468 उचित दर की दुकानें ग्रामीण सहकारिता के द्वारा संचालित थी। दूसरे शब्दों में ग्रामीण क्षेत्रों में सार्वजनिक

वितरण प्रणाली के अधीन लगभग28 प्रतिशत उचित दर की दुकानों में सहकारी संस्थाओं की हिस्सेदारी है। इन सहकारी समितियों के द्वारा वर्ष1988-89 में वितरित उपभोक्ता वस्तुओं का अनुमानित मूल्य2275 करोड़ रुपये आँका गया है जो वर्ष1987-88 में2075 करोड़ रुपये था। वर्ष 991-92में3000 करोड़ रुपये की उपभोक्ता वस्तुएँ के कारोबार का लक्ष्य रखा गया है। .

उपरोक्त विवरणों से स्पष्ट है कि ग्राम सहकारिता उपभोक्ता कारोबार में महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रही है। ग्रामीण एवं सहकारी विकास परिषद् द्वारा किए गए एक अध्ययन नमूने के आधार पर से यह निष्कर्ष निकला है कि समितियाँ अपेक्षाकृत संतोषजनक ढंग से कार्य कर रही है, और इसके संख्या में विस्तार की आवश्यकता है। सहकारी समितियों द्वारा किए गए उपभोक्ता कारोबार में गुजरात, तमिलनाडु, व मध्यप्रदेश राज्यों में वर्ष88-89 में महत्वपूर्ण वृद्धि हुई है।

नीतियों में बदलाव आवश्यक

वर्तमान समय में उचित दर की दुकानों(एफ०पी०एस०) का72 प्रतिशत निजी स्वमित्व में संचालित है। आवश्यकता इस बात की है कि नीति में परिवर्तन बदलाव कर यह कार्य व्यक्ति के स्थान पर संस्था को सौंपा जाए। व्यक्ति, विशेष हमेशा अपने लाभ से प्रेरित होकर कार्य करता है, जबकि सहकारी संस्थाएँ समाज के हित को ध्यान में रखकर संचालित होते हैं। ग्रामीण स्तर पर ग्रामीण साख सहकारिता इन कार्यो के सम्पादन के लिए उपयुक्त एजेन्सी हैं। किसी व्यक्ति को उचित दर की दुकानें संचालित करने के लिए तब ही दी जाए जब ग्राम की सहकारी संस्था किसी कारणवश व्यवसाय करने में असमर्थ हो। यह कार्य ग्राम के शिक्षित बेरोजगारों का समूह बनाकर भी किया जा सकता है।

प्रबन्ध की दृष्टि से सहकारी समितियों में कुछ कमियाँ अवश्य है लेकिन एक लोकतांत्रिक संस्था (चुने गए प्रतिनिधियों की संस्था) होने के कारण व्यवसाय/क्रियाकलापों पर नियंत्रण बना रहता है। रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया द्वारा गठित एग्रीकल्चरल क्रेडिट रिव्यू कमेटी (खुसरो कमेटी)1989 ने इन समितियों के व्यवसाय विकास हेतु उपभोक्ता व्यवसाय करने पर बल दिया है। सहकारी संस्थाओं द्वारा संचालित उचित दर की दुकानों (एफ०पी०एस०) के कुछ अपने गुण हैं, जिससे ग्रामीण/उपभोक्ताओं को अनेक लाभ प्राप्त होते हैं।

1. ग्रामीण सहकारी संगठन ग्रामीण समुदाय/का एक ऐच्छिक संगठन है।

2. संस्था/समिति का गठन क्षेत्र/ग्रामीण लोगों की विभिन्न आवश्यकताएँ (यथा ऋण, विपणन, उपभोक्ता, कृषि निवेश की पूर्ति) एवं कम लागत पर सेवाएँ प्रदान करने के लिए किया जाता है।

3. ग्रामीण, संस्था के प्रबन्ध में प्रयत्न रूप से भागीदार होते हैं (लोकतांत्रिक) नियंत्रण एवं प्रबन्ध जिससे संस्था के क्रियाकलापों पर बेहतर नियंत्रण रहता है।

4. संस्था द्वारा वितरित खाद्य एवं अन्य पदार्थों में मिलावट नहीं होती। साथ ही कम नाप तौल एवं अत्यधिक मूल्य लेने की भी शिकायत नहीं करवाई जाते।

5. समिति नियंत्रित वस्तुओं के अतिरिक्त ग्रामीणों को दैनिक जीवन में काम आने वाली अन्य वस्तुओं की भी आपूर्त्ति करती है, जिनका मूल्य उचित होता है व बाजार से अपेक्षाकृत कम रहता है।

6. समिति अभावकाल में भी दुर्लभ वस्तुओं का वितरण कर ग्रामीणों को लाभ पहुँचाती है।

समय की माँग :

महानगरों/राज्य स्तर/जिला स्तर पर सुपरबाजार राज्य सहकारी उपभोक्ता भंडार, जिला थोक उपभोक्ता सहकारी भंडार, उनकी शाखाएँ, शहरी लोगों को सुविधा प्रदान करने के लिए कार्यरत हैं। समस्या ग्रामीण क्षेत्रों की है। योजना आयोग एवं भारत सरकार द्वारा उपभोक्ता सहकारिता पर गठित समिति ने यह स्पष्ट रूप से सिफारिश की हैं कि ग्रामीण क्षेत्रों के लिए पृथक से ग्रामीण उपभोक्ता सहकारी भंडारों की स्थापना, साधनों, प्रबन्ध क्षमता एवं समुचित व्यापार के अभाव में सम्भव नहीं है। अतएव यह कार्य ग्रामीण साख सहकारी समितियाँ (पैक्स, लैम्पस, एफ०एस०एस०) को सौंपा जाना चाहिए। सभी पहलुओं से सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अन्तर्गत उचित दर की दुकानें संचालन के लिए ग्रामीण सहकारिता को दायित्व सौंपना समय की माँग है। यह सही है कि कुछ राज्यों की समितियाँ इन कामों को स्वयं आगे आकर नहीं लेना चाहती, जिसका मुख्य कारण नियमों के तहत निर्धारित तरीके से व्यवसाय करने पर मार्जिन कम प्राप्त होता है। व्यक्ति विशेष तो कई बार गलत तरीके अपनाकर कार्य करता है जो लोकतांत्रिक संस्था के लिए सम्भव नहीं है। राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम ने (एन०सी०डी०सी०) ग्रामीण क्षेत्रों में उपभोक्ता वस्तुओं सहित अनिवार्य वस्तु के वितरण कार्य को प्रोत्साहित कर उसका विस्तार

करने के लिए पर्याप्त वित्तीय सहायता उन समितियों को देना प्रारम्भ किया है जिन्होंने यह कार्य अपने हाथों में लिया है। 1989-90 में एन०सी०डी०सी० द्वारा दी जानेवाली सहायता की राशि 3.70 करोड़ रुपये थी।

सार्वजनिक वितरण प्रणाली को प्रभावी बनाने हेतु-कार्य योजना

सार्वजनिक वितरण प्रणाली को प्रभावी तथा भ्रष्टाचार मुक्त करने में सभी स्तरों से सहयोग आवश्यक है। निम्न कार्य योजना के जरिए सार्वजनिक वितरण प्रणाली को काफी हद तक प्रभावी बनाया जा सकता है।

1. नागरिक आपूर्त्ति बुनियादी रूप से राज्य सरकार के अधिकार क्षेत्र में आता है अतएव राज्य सरकारें आपूर्त्ति विभाग की कार्य प्रणाली पर प्रभावी नियंत्रण रखे। दोषी पाए जाने पर किसी स्तर पर नरमी ना बरती जाए, चाहे वह किसी स्तर का व्यक्ति/अधिकारी अथवा कर्मचारी हो।

2. उचित दर दुकानों को आपूर्त्ति विभाग द्वारा समय पर सही ढंग से सामग्री उपलब्ध कराई जाये। सम्भव हो तो अगले माह की एलाट कोटा सामग्री चालू माह के अन्तिम सप्ताह में उपलब्ध कराने की व्यवस्था हो।

3. प्रत्येक ग्रामीण गरीब परिवार को कार्ड बनाकर पंचायत/समिति के माध्यम से दिया जाए ताकि उन्हें लाभ प्राप्त हो सके। इस प्रक्रिया को सरल बनाया जाए।

4. केन्द्र सरकार सस्ते गल्ले-गेहूँ, चावल तथा मिट्टी का तेल राज्यों के कोटे को आवश्यकतानुसार समीक्षा कर वृद्धि करे।

5. किसी दुकानदार/सहकारी संस्था के द्वारा धांधली वस्तुओं को खुले बाजार में बेच डालने की जानकारी मिलने पर कठोर से कठोर दंड दिया जाए।

6. दुकानों पर चौकसी के लिए नागरिकों की प्रतिनिधि समितियाँ गठित की जाए और उसे कार्य सम्पादन हेतु आवश्यक अधिकार दिया जाए। चौकसी समिति में पर्याप्त संख्या में महिलाओं को शामिल करना आवश्यक है।

7. मूल्य तालिका एवं दी जानेवाली वितरण वस्तुओं की निर्धारित मात्रा की सूचना स्पष्ट रूप से दर्शाई जाए।

8. 1000 से 1500 तक एवं आदिवासी दूरस्थ क्षेत्रों में कम जनसंख्या पर दुकानें खोली जायें।

9. समय-समय पर जाँच अचानक निरीक्षण कर यह सुनिश्चित किया जाए कि गरीबी रेखा से नीचे कमजोर वर्ग वाले ग्रामीणों को वस्तुएँ उपलब्ध हो रही हैं अथवा नहीं।

10. उचित दर की दुकान संचालन हेतु दी जानेवाली कमीशन की राशि में समय एवं लागत व्यय को देखते हुए वृद्धि करना आवश्यक है।

राज्य सरकारें प्रभावी कदम उठाकर जनवितरण प्रणाली के प्रबंधन में काफी हद तक सुधार कर सकती हैं। इस कार्य हेतु राज्य सरकारों को राजनीतिक इच्छा शक्ति और संकल्प का परिचय देना होगा।

ए.सी.टी.आई
सहकारी प्रबंध संस्थान
शास्त्रीनगर-89.

लाइन पार न करें

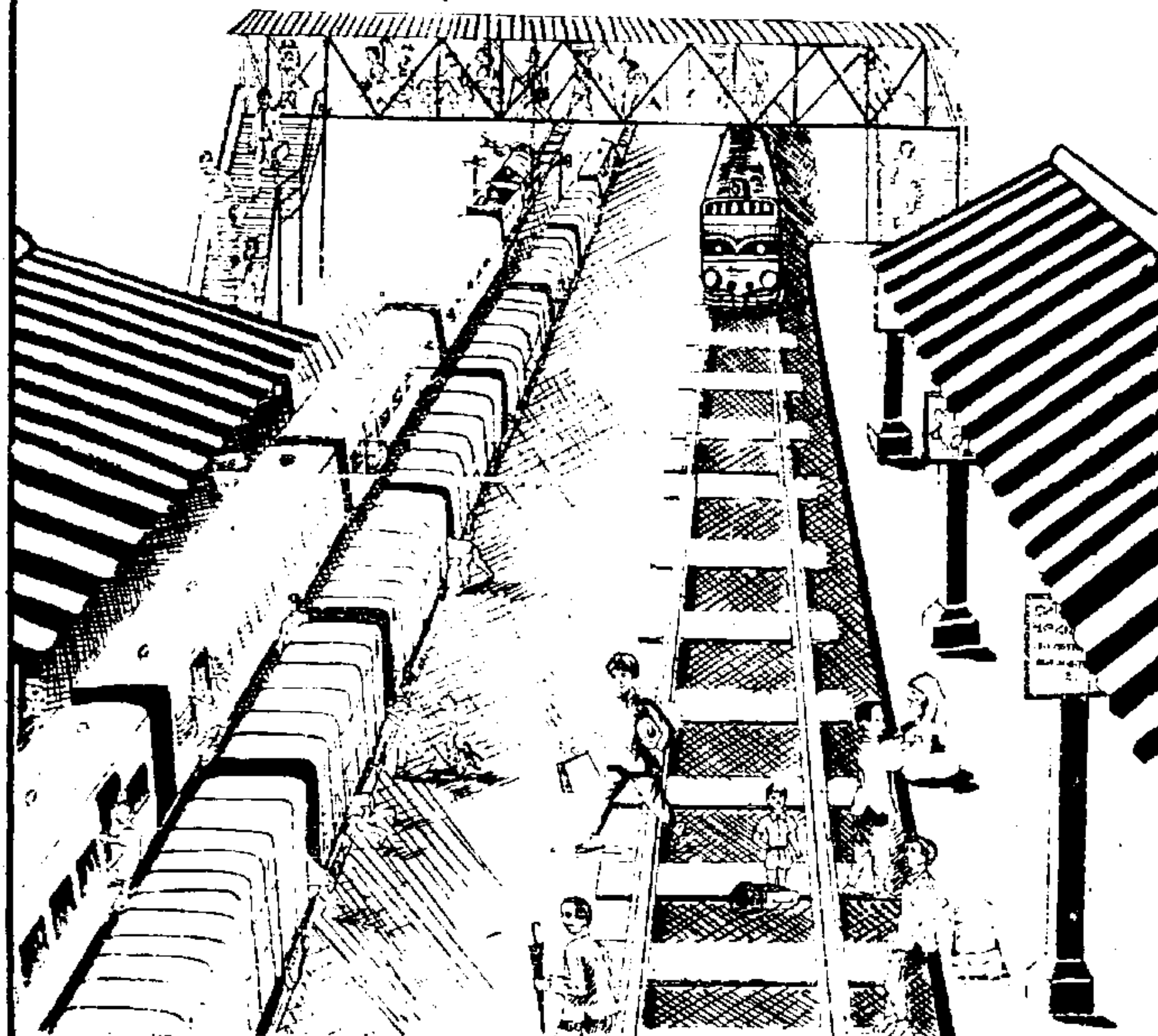

पुल का उपयोग करें
अन्यथा जान का खतरा है ।

संरक्षा • SAFETY

संरक्षा संगठन

उत्तर रेलवे इलाहाबाद मण्डल के सौजन्य से

गांव-गांव में राशन दुकान योजना

कु॰ दिव्या गुप्ता

भारत सरकार ने आदिवासी, रेगिस्तानी तथा पिछड़े इलाकों में गाँव-गाँव में राशन दुकान खोलने की योजना क्रियान्वित करने का निर्णय लिया है। विगत 25 सितम्बर 1991को भारत सरकार ने इस फैसले की जानकारी दी है।

इस योजना का उद्देश्य आदिवासी तथा दूरदराज के क्षेत्रों में सार्वजनिक वितरण प्रणाली का लाभ गाँव-गाँव तक पहुंचाना है। इस संबंध में भारत सरकार ने मार्गदर्शी निर्देश भेजकर राज्य सरकारों से योजना को क्रियान्वित करने का प्रारूप मांगा है।

वर्तमान में सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अंतर्गत ग्रामीण क्षेत्रों में यह प्रयास किया गया है कि प्रत्येक पंचायत में अथवा अधिक से अधिक दो-या तीन पंचायतों को मिलाकर एक दुकान स्थापित की जाये। ये दुकानें प्रथम प्राथमिकता के आधार पर सहकारी समितियों को तथा उनकी अनुपलब्धता या असमर्थता की स्थिति में व्यक्तिगत दुकानदारों को आवंटित की जायें। सहकारी समितियाँ प्रायः शासकीय गल्ले की दुकानें चलाने में अक्षम सिद्ध हुई हैं। इन दुकानों में मुनाफे का हिस्सा इतना सीमित होता है कि सहकारी समितियाँ इन दुकानों को चलाने में प्रायः घाटा उठाती हैं। व्यक्ति गत दुकानदार हेराफेरी द्वारा आर्थिक लाभ उठाते हैं। फलस्वरूप, सार्वजनिक वितरण प्रणाली का उद्देश्य ही समाप्त हो जाता है। अतएव, केन्द्र सरकार इन दुकानों के साथ मिट्टी का तेल, माचिस, नमक आदि कुछ अन्य जनोपयोगी वस्तुओं को भी जोड़ना चाहती है।

मुख्य समस्या यह है कि आदिवासी क्षेत्रों में प्रत्येक गाँव में न तो सहकारी समिति बन सकती है और न ही ये सहकारी समितियाँ सार्वजनिक वितरण प्रणाली की दुकानें चलाने में सक्षम सिद्ध हो सकती हैं। आदिवासी क्षेत्रों में प्रत्येक गांव में व्यक्तिगत दुकानें भी उपलब्ध नहीं हैं। जहाँ व्यक्तिगत दुकाने उपलब्ध हैं वहाँ भी सार्वजनिक वितरण प्रणाली की दुकानें यदि उन्हें दी जाती हैं तो वे शोषण का माध्यम बन सकती हैं। अतएव, आवश्यकता इस बात की है कि आदिवासी क्षेत्र के गाँव के स्थानीय आदिवासी युवकों तथा उनके नहीं आने की स्थिति में अन्य शिक्षित बेरोजगारों को शिक्षित बेरोजगार योजना के अन्तर्गत रोजगार कार्यालयों से पंजीकृत कराकर उन्हें दुकाने आबंटित करने का आशय-पत्र जारी किया जाये जिसके आधार पर सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक उन्हें ऋण दे सकें तथा शासकीय अनुदान स्वीकृत किया जा सके। ये दुकानें अपने स्वयं के घरों में चलाई जा सकती हैं। जहाँ भी संभव हो कार्यस्थल वर्क शेड के रूप में उन्हें आवास - सहदुकान हेतु भवन निर्माण सुविधा आदिवासी तथा अनुसूचित जाति कल्याण योजनाओं के अंतर्गत अनुदान उपलब्ध कराकर निर्मित कराई जाए। गाँव-गाँव सार्वजनिक वितरण प्रणाली की दुकानें खाद्य विभाग तथा आदिम जाति एवं अनुसूचित जाति कल्याण विभाग के सहयोग से ही स्थापित कर सुचारू रूप से चलाई जा सकती हैं।

जहाँ चलित सार्वजनिक वितरण प्रणाली की दुकान योजना लागू है वहां इन गांवों की राशन दुकानों को खाद्यान्न डिलवरी की व्यवस्था इन चलित दुकानों के माध्यम से की जानी चाहिये। जहाँ चलित दुकान व्यवस्था लागू नहीं है वहाँ खाद्यान्य ढुलाई की प्रतिपूर्त्ति शासन, द्वारा की जानी चाहिये ताकि ढुलाई का व्ययभार उपभोक्ताओं अथवा सार्वजनिक वितरण प्रणाली की दुकानों के युवकों को नहीं उठाना पड़े।

केन्द्र सरकार की योजना के अनुसार देश भर में 1500 विकासखंडो में यह योजना लागू की जाएगी। संभावना यह है कि भविष्य में इस योजना का और अधिक विस्तार किया जाएगा। आवश्यकता इस बात की है कि म॰ प्र॰ के 559 विकासखंडों में से कम से कम 236 विकासखंडों में सार्वजनिक वितरण प्रणाली की गाँव-गाँव राशन दुकान योजना लागू की जाये। मध्य प्रदेश के विकासखंडों में 174 विकासखंड पूर्णतया आदिवासी उपयोजना क्षेत्र के अंतर्गत आते हैं तथा 62 विकासखंड आंशिक रूप से आदिवासी उपयोजना क्षेत्र के अंतर्गत आते हैं। मध्य प्रदेश में 1.48 लाख वर्ग किलोमीटर अनुसूचित क्षेत्र तथा 1.77 लाख वर्ग किलोमीटर में आदिवासी उपयोजना क्षेत्र फैला हुआ है जिसमें से क्रमशः 129.85 लाख तथा 147.25 लाख यानी कुल 277.10 लाख जनसंख्या निवास करती हैं जिसका दो तिहाई भाग आदिवासी जनसंख्या का है। अतएव, इतनी बड़ी जनसंख्या को लाभान्वित करने के लिये हर हालत में, कम से कम 236 विकासखंडों में, यह योजना वित्तीय वर्ष 1991-92 में ही लागू की जानी चाहिये।

दिव्या गुप्ता
1159 नेपियर टाउन,
जबलपुर-482 001

ग्रामीण पेयजल व्यवस्था का मूल्यांकन

डॉ० अजय जोशी

पानी मनुष्य की आधारभूत आवश्यकताओं में से एक है। मनुष्य बिना भोजन के तो कुछ दिन तक रह सकता है परंतु बिना पानी के थोड़े समय तक जीवित रहना भी मुश्किल है। हमारी देश की जनसंख्या का लगभग तीन चौथाई से अधिक भाग ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करता है। गांवों में निवास करने वाली जनसंख्या का एक बड़ा भाग शुद्ध पेयजल के अभाव से ग्रस्त है। राजस्थान के रेगिस्तानी क्षेत्रों में तो मीलों दूर चलकर पानी लाना पड़ता है। पानी भी ऐसा मिलता है जो साधारणतः पीने योग्य नहीं होता।

राष्ट्रीय पेयजल मिशन

यद्यपि पानी की सप्लाई की व्यवस्था मुख्यतः राज्यों का विषय है। राज्य सरकारें अपने-अपने स्तर पर पीने के पानी की उचित व्यवस्था करने का प्रयास भी करती है। केन्द्रीय सरकार ने पीने के पानी की व्यवस्था में राज्यों को सहयोग देने हेतु वर्ष 1986 में राष्ट्रीय पेयजल मिशन बनाया। मिशन ने वर्ष 1990 तक पानी की समस्या वाले सभी गांवों को पीने का पानी पहुंचाने की योजना अपने हाथ में ली। राष्ट्रीय पेयजल मिशन ने पेयजल के संदर्भ में जो नीति बनायी उसकी मुख्य बातें इस प्रकार हैं :-

1. वर्ष 1980 की सूची वाले समस्याग्रस्त गांवों में से बचे हुए गांवों में छठी योजना में पानी पहुंचाना।
2. वर्ष 1985 की सूची के अनुसार पानी व साधनों से वंचित सभी गांवों में पानी की व्यवस्था करना।
3. रसायनों व कीड़ों से दूषित पानी पीने वाले गांवों में शुद्ध पानी पहुंचाना।
4. 40 लीटर प्रति व्यक्ति प्रतिदिन से कम पानी की उपलब्धता वाले गांवों में पानी पहुंचाना।

राष्ट्रीय पेयजल मिशन को पीने योग्य पानी की उपलब्धता के उद्देश्य में सहायता हेतु विभिन्न समस्याओं के आधार पर 5 उपमिशन भी बनाये गये जो मुख्यतः निम्न बातों पर केन्द्रित थे :-

1. फ्लुरोसिस पर नियंत्रण।
2. अतिरिक्त लोह अंश समाप्त करना।
3. पानी में कीड़े दूर करना।
4. वैज्ञानिक तरीके से जल संसाधन की खोज।जल संरक्षण, ।

मिशनों की प्रगति

राष्ट्रीय पेयजल मिशन तथा उप मिशनों ने पेयजल की उपलब्धि की दृष्टि से वैज्ञानिक तरीकों से पेयजल साधनों का पता लगाने का प्रयास किया। मिशन ने पेयजल प्राप्ति के परम्परागत तरीकों में सुधार किया तथा जल की उचित तरीके से सफाई पर बल दिया। मिशन ने पेयजल व्यवस्था में सामुदायिक भागीदारी के अंतर्गत ग्राम पंचायतों व स्वैच्छिक एजेन्सियों का सहयोग लेने का प्रयास किया। स्वच्छ पेयजल की प्राप्ति हेतु लोगों में चेतना जगाने का अभियान भी मिशन के अन्तर्गत चालू किया गया।

सातवीं पंचवर्षीय योजना के अंतर्गत राष्ट्रीय पेयजल मिशन के माध्यम से ग्रामीण क्षेत्रों में पेयजल की उपलब्धि हेतु केन्द्रीय तथा राज्य सरकारों ने जो राशि निर्धारित की उसे तालिका-1 द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है :-

तालिका-1

सातवीं योजना में मिशनों की वित्तीय प्रगति

(करोड़ रु०)

वर्ष	त्वरित ग्रामीण जलापूर्ति कार्यक्रम टेक्नोलोजी मिशन, ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम	न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम	योग
1985-86	297.42	412.62	710.04
1986-87	322.13	465.64	787.77
1987-88	385.99	486.44	872.43
1988-89	436.74	533.12	969.86
1989-90	425.00	559.22	984.22
योग	1867.28	2457.04	4324.32

स्रोत : वार्षिक रिपोर्ट 1989-90 ग्रामीण विकास विभाग, कृषि मंत्रालय, नयी दिल्ली पृष्ठ-42.

तालिका-1 से यह स्पष्ट है कि विभिन्न योजनाओं यथा त्वरित ग्रामीण जलापूर्ति कार्यक्रम, टैक्नोलॉजी मिशन, ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम आदि केन्द्रीय योजनाओं के अन्तर्गत ग्रामीण पेयजल व्यवस्था हेतु सातवीं पंचवर्षीय योजना में कुल 1867.28 करोड़ रुपये का व्यय किया गया । इसी प्रकार न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के अन्तर्गत राज्यों ने 2457.04 करोड़ रुपये का व्यय ग्रामीण पेयजल व्यवस्था तथा उसके सुधार हेतु किया । वर्ष 1990-91 के लिए केन्द्र सरकार ने 423.00 करोड़ रुपये तथा राज्य सरकारों ने 656.34 करोड़ रुपये ग्रामीण पेयजल व्यवस्था हेतु निर्धारित किये हैं ।

सातवीं पंचवर्षीय योजना के अंतर्गत केन्द्र व राज्य सरकारों ने ग्रामीण पेयजल व्यवस्था के सुधार हेतु जो प्रयास किये हैं उनके अनुकूल परिणाम आने लगे हैं । देश के 583003 गांवों में से छठी पंचवर्षीय योजना तक 421281 गांवों में पीने के पानी की सप्लाई करायी गयी । सातवीं पंचवर्षीय योजना में 161722 गांवों में पीने के पानी की सप्लाई करने का लक्ष्य रखा था । सातवीं योजना के प्रत्येक वर्ष में जिन गांवों को पीने का पानी उपलब्ध कराया गया उसे तालिका-2 द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है :-

तालिका- 2

ग्रामीण क्षेत्रों में पेयजल की उपलब्धि

वर्ष	पानी पहुंचाये गये गांवों की संख्या
1985-86	24567
1986-87	44102
1987-88	46465
1988-89	25722
1989-90	16671 (लक्ष्य)

स्रोत : वार्षिक रिपोर्ट 1989-90 ग्रामीण विकास विभाग, कृषि मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली पृष्ठ 42.

तालिका-2 से यह ज्ञात होता है कि सातवीं योजना के पहले चार वर्षों में 140856 गांवों में पीने का पानी पहुंचाया गया तथा वर्ष 1989-90 के लिए 16671 गांवों के पीने का पानी पहुंचाने का लक्ष्य रखा गया । सातवीं योजना के अंतर्गत निर्धारित लक्ष्य के अनुरूप गांवों में पीने का पानी उपलब्ध करा दिया जाय तो भी आठवीं योजना के प्रारंभ तक 4195 गांव पीने के पानी की समुचित व्यवस्था से वंचित रह जायेंगे ।

ग्रामीण पेयजल की समस्याएं

ग्रामीण क्षेत्रों में पीने के पानी की उपलब्धि के अतिरिक्त भी कई समस्याएं हैं । पीने का पानी पर्याप्त मात्रा में ग्रामीण क्षेत्रों में उपलब्ध नहीं होता । पीने के पानी के लिए जो हैण्ड पम्प, कुएं, नहरें आदि बनायी गयी हैं उनकी सुदूर गांवों से दूरी के कारण भी ग्रामीण क्षेत्र के निवासियों को पानी लाने में कठिनाई होती है । फलस्वरूप गांव की महिलाओं को मीलों दूर चलकर पानी लाना पड़ता है । पानी में रसायनों की बहुलता, खारापन, फ्लोराइड आदि होना भी आम समस्याएं हैं । पीने के पानी की दृष्टि से जो कुएं व हैण्ड पंप आदि बनाये गये हैं उनमें उचित रख रखाव की भी समस्या उत्पन्न हो जाती है । उससे गांव के लोगों को पीने का पानी पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध नहीं हो पाता । पानी के फिल्टर आदि की उचित व्यवस्था नहीं होने के कारण शुद्ध जल ग्रामीण क्षेत्रों में उपलब्ध नहीं हो पाता । गर्मी के दिनों में जलस्तर नीचे चले जाने के कारण भी कुओं व हैण्ड पम्पों आदि से पानी पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध नहीं होता । ऐसी बहुत सी समस्याएं हैं जिनके कारण पीने के पानी की समस्या ग्रामीण क्षेत्रों में बनी ही रहती है । समय रहते इनका समाधान आवश्यक है ।

सुझाव

ग्रामीण क्षेत्रों में पीने के पानी की उपलब्धि हेतु कुछ प्रभावी प्रयासों की आवश्यकता है । केन्द्र व राज्य सरकारों को चाहिये कि वे पीने के पानी के अधिकाधिक स्रोतों का विकास करें । जहां पानी की बहुलता है वहां से नहरें आदि बनवाकर उन क्षेत्रों में पानी पहुंचाया जाना चाहिये जहां पीने के पानी की समस्या है । गांव में बनाये गये कुओं, बावड़ियों, नहरों आदि को समय-समय पर साफ कराया जाना चाहिये तथा यदि आवश्यक हो तो इन्हें गहरा कराया जाना चाहिये । स्थानीय लोगों का इस दिशा में महत्वपूर्ण योगदान हो सकता है । ग्रामीण क्षेत्र के निवासियों में इस हेतु चेतना जाग्रत करनी चाहिये । जल संसाधनों के उचित प्रबंध पर बल दिया जाना चाहिये तथा जल संसाधन के अपव्यय को रोकने का प्रयास किया जाना चाहिये । गांवों में शुद्ध पेयजल की उपलब्धि की दृष्टि से छोटे फिल्टर प्लांट लगाकर पानी स्वच्छ करके पीने हेतु गांवों में उपलब्ध कराया जाना चाहिये ।

ऐसे ही बहुत से उपाय हैं जिन्हें अपनाकर गांवों में शुद्ध पीने योग्य पानी उपलब्ध कराया जा सकता है । केन्द्रीय सरकार, राज्य सरकारों, स्वयंसेवी संस्थाओं तथा स्वयं समाज का इस दिशा में महत्वपूर्ण योगदान हो सकता है । सभी वर्गों को मिलजुलकर इस दिशा में प्रयास करने चाहिये ताकि देश के सभी निवासियों को शुद्ध तथा पीने योग्य पानी उपलब्ध हो सके ।

प्राध्यापक,
स्नातकोत्तर व्यवसाय प्रशासन विभाग,
श्री जैन पी.जी. कॉलेज,
गंगाशहर, बीकानेर (राज)

ग्रामीण क्षेत्रों में पेयजल समस्या

ममता

बहुत से गांवों में आज भी जिन कुओं का पानी पीने के काम में लिया जाता है उनकी स्थिति सन्तोषजनक नहीं है, बल्कि उनकी दीवारें ऊँची नहीं हैं, ऊपरी शेड का अभाव है तथा नियमित रूप से उसमें सफाई की विधि को नहीं अपनाया जाता जबकि यह सभी काम ऐसे हैं जिन्हें स्थानीय स्तर पर सुगमता से किया जा सकता है बशर्ते गांववासी आपसी सहयोग के आधार पर इसमें रुचि लें।

ऐसे भी गांव हैं जिनमें स्थानीय ग्राम पंचायतों और युवा मंगल दल जैसी स्वैच्छिक संस्थाओं की पहल पर बदलाव आया है किन्तु सवाल जल के प्रति स्वच्छता का दृष्टिकोण अपनाने का है लोगों को इस संबंध में जागरूक करने का है। जिस पर अमल करने की आवश्यकता है। इसके अलावा एक जरूरी बात यह है कि ग्रामीण क्षेत्रों में स्वच्छ पेयजल आपूर्ति में गांववासियों का पूरा सहयोग मिलना जरूरी है।

भूमि भीतर के जल का उपयोग हमारे देश में सदियों से होता चला आ रहा है किन्तु हवा पानी और कूड़े करकट में इसके दूषित होने की सम्भावना बनी रहती है। यद्यपि गंदला होने पर दिखाई देता है कि पानी पीने योग्य नहीं है किन्तु गुणवत्ता की दृष्टि से अशुद्ध होने के बावजूद साफ दिखाई देता है। अतः गांवों में आज भी जल उपचार के बहुत से देशी तरीके प्रचलित हैं उन्हीं में से एक है जल को मिट्टी के बर्तनों में छानना। इस विधि में पहले कोयला बार वगैरा का उपयोग होता था किन्तु अब पानी छानने की सस्ती कैण्डल मिलने लगी है। क्लोरीन की टिकिया भी उपलब्ध है जो किफायती है और इस्तेमाल करने में आसान भी है। इसके अलावा एक और तरीका है जिसमें एक और दो के अनुपात में ब्लीचिंग पाउडर और थोड़ा सा रेत कुएं में लटका दिया जाता है। करीब एक डेढ़ किलो तक ब्लीचिंग पाउडर एक सप्ताह के लिए पर्याप्त होता है। प्रदूषित होने पर पेयजल स्वास्थ्य के लिए गंभीर खतरा बन जाता है। बस्तियों, कारखानों, कृषि एवं पशुओं का कचरा और सीवर आदि के कारण नदियों का जल अशुद्ध होता है। भूमि तल का जल यानी खराब तालाब, झील, नहर और नदियों से हमारे देश में काफी जलापूर्ति की जाती है। ग्रामीण क्षेत्र के लिए बालू द्वारा जल छानने का तरीका उपयोग में लाया जाता है किन्तु पानी को एकत्र करना फिर उसे दूसरी जगह जमा करना बहुत आसान नहीं है। अतः जल का शुद्धिकरण घरेलू स्तर पर किया जाना चाहिए और ग्रामीण क्षेत्रों में पानी को पीने योग्य बनाने की सभी विधियों की जानकारी पहुंचाए जाने पर जोर दिया जाना चाहिए।

महीन जाली अथवा सिरेमिक की बत्तियों से पानी को छानकर पीने योग्य बनाया जा सकता है किन्तु जल कितना दूषित है इसका भी पता लगाया जाना चाहिए। विज्ञान के छात्रों तथा अध्यापकों के दल द्वारा इस मामले में काफी हद तक कुछ किया जा सकता है। बशर्ते उन्हें प्रशिक्षण एवं जल की जांच करने के लिए आवश्यक उपकरण आदि की किट उपलब्ध करा दी जाए। पेयजल का रंग, तापमान, विद्युतीय प्रभाव और स्वाद उसके भौतिक गुणों में आते हैं। इसके अतिरिक्त रसायनिक दृष्टिकोण से कम लागत पर जल का शुद्धिकरण करने के लिए गांवों में बहुत कुछ किया जाना जरूरी है।

औद्योगिक विष अनुसंधान केन्द्र द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों में पेयजल की शुद्धता की जांच करने के लिए इकाई तैयार की गई। जल विश्लेषण इकाईयों की कीमत 9 हजार रुपये ही रही है लेकिन इसकी कीमत घटकर केवल 5 हजार ही रह गई है। इसके अतिरिक्त सचल दल जल विश्लेषण प्रयोगशालाएं भी बनाई गई।

दरअसल स्वच्छ जल की समस्या पूरे देश की समस्या है। साथ ही ग्रामीण क्षेत्रों में पेयजल के लिए इण्डिया मार्का-2 हैण्ड पम्प की बहुत मांग है। लेकिन इस बात को ध्यान में रखा जाना चाहिए कि इन पम्पों को लगाने के साथ ही इनसे मिलने वाले जल की गुणवत्ता की भी जांच की जाए। पर्यावरण शिक्षा केन्द्र अहमदाबाद द्वारा "गंगा प्रदूषण जागृति कार्यक्रम" एक अच्छी शुरुआत है। इसके अन्तर्गत उ०प्र०, बिहार, पश्चिम बंगाल में गंगा किनारे स्थित उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों में शैक्षिक ज्ञान तथा व्यावहारिक तकनीक का उपयोग करते हुए छात्र नदी के जल की गुणवत्ता की जांच करते हैं। इसके लिए पहले योजना दल कार्यक्रम सामग्री, प्रयोगशाला परीक्षण क्षेत्र, परीक्षण नमूना क्षेत्र, गुणवत्ता मापन के प्रांचल क्षेत्र किट उसकी

उपयोग विधि और मार्गदर्शिका जैसे बिन्दुओं पर तैयारी पूरी की गई फिर प्रशिक्षण दिया गया और जल गुणवत्ता परीक्षण हेतु रसायनिक घोल उन्हें दिया गया । इसके परिणाम आशाजनक एवं सराहनीय रहे । देश के अन्य क्षेत्रों में ऐसी गति देने की आवश्यकता है ।

शहरी क्षेत्रों में सम्पन्न लोगों के लिए पेयजल एक सहज सुविधा भले ही क्यों न लगती हो, लेकिन बहुत से ग्रामीण क्षेत्रों में पेयजल के लिए बड़ी दिक्कतें उठानी पड़ती हैं । खासतौर से महिलाओं के लिए यह कठिन चुनौती होती है । इसलिए अब आवश्यक हो गया है कि पेयजल के उपयोग में पूर्णतः सावधानी और किफायत बरती जाए । पानी और स्वच्छता के बारे में नवचेतना और जागृति का संचार करने में महिलाएं अग्रणी भूमिका निभा सकती हैं बशर्ते उन्हें प्रेरित किया जाए । आमतौर पर घरों में जिन बर्तनों में पानी रखा जाता है उसमें से निकालने के लिए लम्बे हत्थे वाले बर्तन का उपयोग नहीं किया जाता । इस कारण स्वच्छ पेयजल के लिए किए गए सारे प्रयत्नों पर पानी फिर जाता है क्योंकि पानी लेने वाले गन्दे हाथों से वह जल दूषित होता रहता है । अतः बर्तन के उपर ढक्कन तथा पानी लेने के लिए हत्थेदार बर्तन होना आवश्यक है ।

ग्रामीण क्षेत्रों में पेयजल से संबंधित समस्या दूर करने के लिए निम्नांकित पर विशेष बल दिए जाने की आवश्यकता है :

खारेपन पर नियन्त्रण, फ्लोरोसिस पर नियन्त्रण, अधिक लौहे को दूर करना, गिनीकृमि को दूर करना, वैज्ञानिक तरीकों से जल स्रोतों का पता लगाना, जल संरक्षण और भूगत जल की सम्पूर्ति, जल गुणवत्ता की निगरानी, परम्परागत तरीकों में सुधार, प्रबन्ध सूचना प्रणालियों और प्रक्रियाओं की स्थापना, पंचायतों और स्वयंसेवी ऐजेन्सियों की मार्फत समुदायों को शामिल करना तथा जन जागरूकता अभियान ।

बर्मा के म्यामार नामक सूखा पीड़ित क्षेत्र में एक बोर्ड लगा है कि हमें सोना नहीं पानी चाहिए । यह बात निःसन्देह पानी की महत्ता को प्रकट करती है । अब स्थिति यह आ गई है कि पेयजल का संकट गांव, कस्बे और शहर सभी को अपनी चपेट में ले रहा है । अतः जहां एक ओर इस दिशा में किए गए प्रयासों की समीक्षा नए सिरे से किए जाने की जरूरत है वहीं दूसरी ओर हम सभी को इस ओर कुछ न कुछ करने की जरूरत है और इसका उत्तर सबसे पहला तो यही है कि हमें पानी की एक एक बूंद को बचाना होगा और फौरी तौर पर पानी की बरबादी को रोकना होगा । एक अनुमान के अनुसार एक व्यक्ति को निजी उपयोग के लिए कम से कम 20 लीटर पानी की आवश्यकता पड़ती है जबकि हिसाब लगाएं तो पानी की कुल उपलब्धता के अनुसार विकासशील राष्ट्रों में प्रति व्यक्ति इतने पानी का औसत नहीं आता । आठवें दशक को पेयजल दशक मानकर संयुक्त राष्ट्र संघ ने ऐसी व्यवस्था करनी चाही थी कि कम से कम 80 प्रतिशत ग्रामीणों को पानी पीने को मिल सके । लेकिन इसके बावजूद कोशिशों के वांछित सुधार नहीं हुए । जहां हैण्ड पम्प लगाए गए, वहां उन्हें ठीक तरह से चालू हालत में रखने की जिम्मेदारी लोगों ने नहीं समझी । जब तक यह भावना नहीं आएगी तब तक उपाय कारगर नहीं हो सकेंगे । ऐसी स्थिति में हो सकता है कि पुनः पुराने तालाबों की ओर लौटना पड़े ।

हमारे देश में पर्याप्त जल संसाधन हैं । देश में समग्र संसाधन करीब 1800 घन किमी० होने का अनुमान है जिसमें से करीब एक तिहाई धन किमी० जल का उपयोग लाभकारी प्रयोग हेतु करना सम्भव है । इसके अलावा जमीन के अन्दर छिपे जल संसाधनों की मात्रा भी कम नहीं है तथा 452 घन किमी० भूमिगत जल संसाधन होने का अनुमान है । अतः इस विशाल जल क्षमता का उपयोग करने के लिए जलाशयों का होना तो स्वाभाविक है । इसके अतिरिक्त जल सबसे अधिक महत्व रखता है । इस कारण से सितम्बर 87 में राष्ट्रीय जल नीति को अपनाया गया था और इसके अन्तर्गत परियोजनाएं बनाने हेतु विभिन्न विभागों के सहयोग से विविध प्रयास किए जाने की सिफारिश की गई थी । इसमें प्राथमिक क्षेत्रों का निर्धारण करने हेतु पेयजल को सर्वोच्च प्राथमिकता प्रदान की गई थी ।

दैनिक जीवन में जल की मांग निरन्तर वृद्धि की ओर अग्रसर हो रही है । अतः विगत वर्ष 1990 के लिए जो विषय चुना गया था उसका शीर्षक "भविष्य के लिए जल" था ताकि भविष्य में इसकी कमी होने की सम्भावना पर विचार किया जा सके । 1986 से प्रतिवर्ष अप्रैल माह में एक दिन को जल संसाधन दिवस के रूप में मनाया जाता है ताकि जल को राष्ट्रीय सम्पत्ति समझने के प्रति चेतना पेश की जा सके । राष्ट्र की समृद्धि तथा विकास के लिए यह आवश्यक तत्व है । अतः इस ओर गम्भीरता से ध्यान देना बहुत जरूरी है । यद्यपि यह एक अलग बात है कि राष्ट्रीय जल नीति के माध्यम से पेयजल के प्रति सरकारी वचन बद्धता को सुनिश्चित किया गया । एक राष्ट्रीय कार्यक्रम की सभी शुरुआती जरूरतों की पूर्ति इसी दिशा में उठाया गया एक कदम है । ग्रामीण जल आपूर्ति योजनाओं के लिए वार्षिक बजट का मात्र 5 प्रतिशत हिस्सा ही विदेशी

सहायता के रूप में मिलता है । लेकिन फिर इस मुद्दे पर अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं से प्राप्त सहयोग को नकारा नहीं जा सकता । इसी का यह सुपरिणाम है कि देश के कुल जरूरतमन्द गांवों में से 98 प्रतिशत गांवों में आबादी के 85 प्रतिशत हिस्से को स्वच्छ पेयजल उपलब्ध कराने का दावा किया जाता है । अतः जल के बेहतर उपयोग पर बल दिया जाना चाहिए । इसके अतिरिक्त जनसंख्या वृद्धि और बढ़ते प्रदूषण से भी दबाव बढ़ा है और निरन्तर महंगे होते जा रहे जल संसाधनों की प्रतिस्पर्धा गम्भीर हुई है । फिर भी इस दिशा में किए जा रहे प्रयासों की सफलता में गुणात्मक तथा मात्रात्मक दृष्टि से प्राप्त उपलब्धियों पर विचार करना होगा अन्यथा 2000 ई० तक 'सभी के लिए स्वास्थ्य' का लाभ प्राप्त करने में कठिनाई होगी । पानी एक बड़ी जरूरत है लेकिन हम इसे प्रायः भूल जाते हैं कि 80 प्रतिशत बीमारियां पेयजल के कारण होती हैं । हमारे देश में ग्रामीण जल आपूर्ति की शुरुआत 1980 से पूर्व से शुरू हो गई थी । राष्ट्रीय पेयजल मिशन ने 1986 से इस ओर अधिक ध्यान दिया ।

एफ- 88, शास्त्रीनगर
मेरठ-250005 (उ०प्र०)

चन्दो

विमला रस्तोगी

शाम को बादल छा जाने से मौसम में तरुणाई आ गई। दोपहर बाद तक सिर चटका देने वाली धूप खिली थी, कैसी ठनक दिखा रही थी गर्मी। अपने अहं से प्राणियों को झुलसाना चाहती थी। सबकी निगाह घिर आए बादलों पर थी हे भगवान पानी बरस जाए तो राहत मिले। इसी से मिलते-जुलते वाक्य थे जुबान पर। धीरे-धीरे हवा ठंडी हो गई लगता था आस पास कहीं बारिश हो गई है। दिन की तेज लू, तपन और घोर गर्मी के बाद ठंडी हवा प्राणी मात्र का मन मानस तृप्त कर रही थी। एकाएक खुशगवार हुए इस मौसम में मन में उमड़ते उद्वेगों और आक्रोश के कारण अशान्त थी केवल अनुराधा।

यह सरासर अन्याय है। मैं ऐसा नहीं होने दूंगी हरगिज नहीं, बुद-बुदाते ही निश्चय की स्पष्ट रेखाएं उसके माथे पर खिंच गई।

अनुराधा ठाकुर सुमेन्द्र प्रताप सिंह के इकलौते बेटे कुंवर भुवनेश प्रताप सिंह की पत्नी है। चार वर्ष पहले सोलह वर्षीय अनुराधा ने कुन्दन, हीरे मोती जड़े सोने की कीमती जेवर और सच्चे काम का सोने व चाँदी के तार से कढ़ा हुआ लंहगा ओढ़नी पहने इस हवेली में कदम रखा था। उस समय अनुराधा किसी अप्सरा से कम नहीं लग रही थी। देखने वाले की निगाह टिक जाती क्या नहीं था उस लावण्यमयी में। बुरी नजर से बचाने के लिए रोज नजर का टीका लगाती सास जी।

हवेली के लिए अनुराधा के चरण शुभ रहे, ठाकुर साहब की धन सम्पति और यशकीर्त्ति में खूब बढ़त हुई। हवेली के नौकर चाकरों के साथ ठाकुर ठकुराइन ने अनुराधा को सिर आँखों पर बिठा लिया। जिससे अनुराधा मायके का बिछोह और आगे न पढ़ सकने का दुख भूल जाए।

कहते हैं यादों पर किसी का वश नहीं चलता, न जाने क्यों आज अनुराधा के दिमाग की उपजाऊ मिट्टी में चार साल पहले की वह घटनाएं एक के बाद एक उभर आई हैं जिन्हें उखाड़ फेंकने में अनुराधा स्वयं को असमर्थ पा रही है - अपने मामा के घर से दसवीं की परीक्षा देकर अनुराधा अपने घर आई। नई खुशियों उमंगों और उल्लास की गठरी बांधे वह कितने चाव से मां बाबूजी को बताना चाहती थी उसने बहुत मेहनत की है, पेपर बहुत अच्छे हुए हैं, वह प्रथम आएगी, लेकिन उसके घर में कदम रखते ही मां ने कौलिया में भर लिया, उसके और अपने भाग्य को सराहने लगीं, बाबूजी की हां में हां मिला रहे थे कितनी बड़भागी हमारी अनुराधा। आजकल घर बैठे इतना अच्छा घर बर किस्मत वाली लड़की को भी नहीं मिलता। कहां हम कहां सुमेन्द्र प्रताप सिंह, रानी बनकर राज करेगी हमारी अनुराधा।

उस समय मन के आक्रोश को पी गई अनुराधा, क्रोध गले में अटक गया जीभ तालू से चिपक गई।

एक दिन एकान्त पाकर उसने माँ से पूछा था - माँ। मैं यह सब क्या सुन रही हूँ, मुझे विवाह नहीं करना, आगे पढ़ना है।

बेटी, यह तू क्या कह रही है बेटी, सगुन का रूपया, नारियल भी जा चुका है। मां ने अपने चेहरे के सारे निरीह भावों को इस वाक्य में निचोड़ दिया।

बिना मुझसे पूछे ? अनुराधा ने तर्क किया। इसमें पूछने की क्या बात थी इतने नामी रईस खानदान की तू इकलौती बहू बनेगी, अनू तू सोने की कलम से अपनी तकदीर लिखकर लाई है मां उपकृत हो रही थी।

उनकी मां अचानक ज्यादा बीमार हो गई। इसीलिए जल्दी से जल्दी विवाह करना चाहते हैं। शुकर मान ऐसी सौ गति बिनमांगे भगवान ने तेरी झोली में डाल दी। क्या खूब जोड़ी खिलेगी। कहकर मां आनन्दित हो, आंखें बन्द कर कल्पना लोक में विचरने लगी।

अनुराधा मां बाबू जी का जानबूझ कर अनजान बनना समझ नहीं पाई। क्या धन दौलत ने उनके दिलदिमाग बांध दिए उन्होंने उसकी पढ़ाई का भी ख्याल नहीं किया।

अर्न्तद्वन्दों से टकरा-टकराकर लौटी उसकी चेतना अपनी जागरूकता के लिए कोई स्थायी जमीन न बना सकी। उसके तर्क नहीं माने गए। और वह सुमेन्द्र प्रताप सिंह की हवेली में आ गई। एक स्वछन्द नटखट चिड़िया हवेली की चार दीवारी में कैद हो गई, धीरे-धीरे उन्हीं हदों में चहचहाने और उड़ने का प्रयास करने लगी।

समय के साथ वह अपना आक्रोश पीती गई और हवेली की हर चीज से अपना परिचय करने लगी। उसके शरीर को भारी साड़ियां और जेवरों को वजन सहने की आदत पड़ गई। सास की सेवा और हवेली के रखरखाव में उसका समय बीतने लगा। उसके बाद उसने बगीचे के पेड़पौधों में रूचि लेनी शुरू कर दी तभी उसका परिचय हुआ चन्दो से। गोल मटोल, गोरी चिट्टी अच्छे नाक-नक्श, माटी में सना सम्मोहन, कीचड़ में खिलता कमल। देखते ही अनुराधा उसकी तरफ आर्कषित हुए बिना न रह सकी। ऐ इधर सुनो अनुराधा के इस बुलावे को वह नहीं

समझी तो ऐ लड़की - यहां आओ । जोर से कहा अनुराधा ने । दोनों की नजरें मिली लड़की कहीं कोई गल्ती हो गई के भाव से डर गई । सहमी सी उसके पास आई, गर्दन झुकाकर खड़ी हो गई ।

ऐसे बुत बनके क्यों खड़ी हो नाम बताओ अपना ?

जी - - - चन्दो - - - - - - - । एक डरी दबी आवाज निकली

चन्दो, सुनकर हंसी अनुराधा पहले हमारा नाम चन्दा था फिर सब चन्दो कहने लगे। चन्दो से चन्दा अच्छा था न।

अरे तुम खूब बोल लेती हो । अनुराधा ने उसकी गाल पर हल्की सी चपत लगाकर अभयदान दे दिया । आप छोटी मालकिन हैं न । पूछते की उसकी गोल मटोल आंखे अनुराधा के चेहरे पर जम गई ।

देखो हमें छोटी मालकिन या छोटी बहु सुनना अच्छा नहीं लगता तुम हमें दीदी कहा करो । समझी । अनुराधा की बातों का अपनापन चन्दो को बहुत अच्छा लगा ।

तुम किसकी लड़की हो तुमने बताया ही नहीं ।

इस बगीचे के जो माली हैं न हम उन्हीं की बिटिया हैं ।

अच्छा तू माली दादा की बेटी हो । प्रत्यक्ष में इतना ही कहा अनुराधा ने । पर मन ही मन सोचने लगी इस बगीचे के रंग बिरंगे फलों ने एक जुट होकर अपना सौन्दर्य इस लड़की को दे दिया है । माली दादा की सेवाओं का फल है यह लड़की। पढती हो अनुराधा ने पूछा

हां । तीसरी में । पर इस साल के बाद मां नहीं पढाएगी। चन्दो ने सपाट कह दिया ।

क्यों पूछने पर वह बोली मां मुझे किसी घर में काम पर लगा देगी खाना कपड़ा भी मिलेगा और पैसा भी ।

देख चन्दो तू पढ़ाई मत छोड़ना पढलिखकर ही इन्सान सही मानो में इन्सान बनता है । तुझे काम और चाहिए मैं तुझे अपने यहां रख लूँगी । सुनकर चन्दो खुश हो गई ।

तू कल हवेली के अन्दर आना, पर देख मुंह हाथ धोकर बालों में कंघी करके आना, समझी ।

मैं फ्राक भी नया वाला पहनकर आऊंगी, एक फ्राक रखा है मेरे पास । कहते कहते अनदेखी पुलक के भाव तैर गए चन्दो के चेहरे पर ।

चन्दो की छवि अनुराधा की आखों से सीधे मन में उतर आई। दिमाग में घूमते विचारों की तीव्रता में भी उसने निर्णय ले लिया।

चन्दा का स्कूल शाम को लगता था, वह सुबह ही अनुराधा के पास आ जाती । अनुराधा उससे हल्के फुल्के काम करा लेती। दो नए सलवार कुर्त्ते उसे मिलाकर दिए । गुलाबी छींट के सूट में चन्दा की सुन्दरता को चार-चांद लग जाते देखने वाला आकर्षित हुए बिना ना रहता । अच्छे रहन-सहन और खान पान से चन्दो का रंग रूप दिन ब दिन खिलने लगा ।

प्रथम मातृत्व से मंडित अनुराधा की अस्वस्थता में चन्दो ने पग-पग साथ दिया । उन दिनों स्कूल की छुट्टियां थीं । सिर दबाना तलुओं में देसी घी की मालिस करना, फल काटकर देना, जूस निकालना, रसोई से खाना लाना, थाली रखकर आना चन्दो के काम थे ।

चन्दो एक के बाद एक करती रहती । बड़ी हवेली में सबके अलग-अलग कमरे थे उन सबके कमरों में अनुराधा के हाल-चाल चन्दो ही पहुंचाती। बेटी के जन्म पर अनुराधा की हालत खराब हो गई थी । ठाकुर परिवार ने अनुराधा के इलाज में कोई कोई कसर न रखी । चन्दो भगवान से अनुराधा के जल्दी ठीक होने की प्रार्थना करती रहती। शहर के अस्पताल से अनुराधा के सकुशल घर लौटने पर खूब दान दक्षिणा दी गई खैरात बांटी गई। नन्हीं बेटी के लिए अलग आया रख दी गई पर चन्दों ने अपने काम में कभी कोताही नहीं की।

स्वस्थ होने पर अनुराधा ने चन्दो से पढाई पर ध्यान देने को कहा अक्सर अनुराधा चन्दो को पढ़ाती । अक्सर कुंवर भुवनेश प्रताप सिंह अनुराधा से कह देते - हमसे ज्यादा आपको चन्दो की चिन्ता है बस होने लगी जलन । चन्दो मेरा कितना ध्यान रखती है । कुछ पता है आपको बात को वहीं खत्म करने की गरज से कुंवर साहब आगे कुछ नहीं कहते थे ।

माली दादा कभी कभी हाथ जोड़कर गुहार करते - बहूरानी क्यों इस नाचीज के पीछे अपना दिमाग खपाती हैं। इसे पढ़कर कौन सी बैरिस्टरी करनी है । आप लोगों की सेवा में ही अपना कल्याण है। कहने पर अनुराधा एक छोटा-मोटा भाषण उन्हें दे देती ।

सुबह शाम दिनरात आते जाते रहे । अनुराधा की बेटी की किलकारियों से गूंजती हवेली में चन्दो का महत्व और बढ गया, क्योंकि अनुराधा की बेटी सुनयना चन्दो से बहुत हिल गई थी। मायके जाने पर अनुराधा चन्दो को साथ ले जाती । सुनयना से ज्यादा बढ़ रही थी चन्दो। उसने फ्राक पहनना छोड़ दिया, सूट पर चुन्नी डालनी शुरू कर दी, दबे पांव आती तरुणाई ने उसके रूपरंग को और निखार दिया था । वह बार-बार आइना देखती अनुराधा समझ गई यौवन की दहलीज पर रखे कदम उसे रोमान्चित कर रहे है । बड़ी बहन और शुभचिन्तक के नाते अनुराधा ने उसे बहुत कुछ समझा दिया था पर रूप कहीं छिपाए छिपता है अनुराधा मन ही मन बड़बड़ाती - इस मरी को रोटियां लग रही है कौन कहेगा यह 14 साल की है ।

एक दिन अचानक ही एक खबर ने अनुराधा के मन मानस में हलचल लादी । खबर कुंवर साहब ने ही अनुराधा को दी - सुनों चन्दा से अपना मोह कम करो माली दादा उसकी शादी करना चाह रहे हैं ।

चन्दो की शादी । अभी से ? क्या कह रहे हैं आप ? अनुराधा के आश्चर्य का ठिकाना न रहा।

हां उन्हें कोई अच्छा लड़का मिल रहा है, तुम अपनी इच्छानुसार कोई अच्छी चीज चन्दो को दे दो ।

माली दादा का दिमाग खराब हो गया है अभी चौदह की है चन्दो?

तो क्या हुआ देखती नहीं कैसी पहाड़ सी हो गई है क्या कद काठी निकला है । अब उसका हवेली में ज्यादा आना ठीक नहीं। किसी की अच्छी बुरी निगाह पड़े, कौन जिम्मेदार होगा?

हवेली में ऐसा कौन है ? खैर यह बात सोचेंगे पर मैं चन्दो की शादी अभी नहीं होने दूंगी गजब का निश्चय था अनुराधा की आवाज में । - - - - - - - - -कुंवर जी का व्यंग समझते ही अनुराधा भड़की - - मेरे पिता दिल के मरीज थे इधर आपकी माताजी बहुत बीमार थीं । अपनी जिद की खातिर मैं दो परिवार उजाड़ना नहीं चाहती थी । चीख-पुकारों से अपनी डोली दग्ध करना नहीं चाहती थी लेकिन मेरे दम्भ की आधार शिला भुरभुरी नहीं है मैं दम्भी लड़की न बन सकी किन्तु दम्भी बहू जरूर हूँ ।

अनुराधा । रोब था कुंवर की आवाज में । एक माली की लड़की के पीछे इतनी व्याकुलता ?

माली की लड़की की भी इच्छाएं होती हैं सवाल एक लड़की के भविष्य का है वह माली की हो या महाराज की । चन्दो के लिए कुछ भी करते हुए मेरे खंडित दर्प को सकून मिलता है । अब मेरा व्यक्तित्व किर्च-किर्च बिखरने के लिए नहीं है । अनुराधा हर विरोधी हवा को सहने के लिए तैयार थी ।

इस हलचल से हवेली अछूती न रह सकी । नौकर - चाकरों में कानाफूसी होने लगी । उस दिन न चन्दो हवेली में आई ना माली काका ।

इस बात के दो दिन बाद ही धमाकेदार विस्फोट हुआ सुबह सुबह माली दादा ने आकर गुहार की - चन्दो घर में नहीं है मालकिन हम तो बरबाद हो गए बहूरानी । कहीं मुंह दिखाने लायक नहीं रहे। रात हमारे साथ सोई थी सुबह उठे तो नहीं थी उसकी महतारी रो रोकर बुरा हाल कर रही है ।

कुछ अनहोनी घटना ही थी, तुम जबरदस्ती उसका विवाह कराना चाहते थे - न।

क्या करता बहूरानी । अच्छा लड़का मिल रहा था मांग भी नहीं की थी कर्जा लेना पड़ता । माली वास्तव में दुखी था । रात घर में कोई बात हुई ?

क्या बताऊं ? मेरी मत मारी गई थी, मैंने रात फूल सी बच्ची को मारा भी था । क्या पता गुस्से में आकर उसने कहीं जान दे दी हो । कहते कहते माली की आँखों में आंसू आ गए ।

पछताने से कुछ न बनेगा । मालिन से कहो रो रो के सारे जमाने को न सुनाए । वरना लड़की बदनाम हो जाएगी ।

आप ठीक कहती है अब उस कर्म जली से कौन व्याह करेगा? क्या पता वह जिंदा भी है या - - -- - - - -

चन्दो कायर नहीं है वह आत्महत्या नहीं करेगी, तुम्हारी बातों ने उसे भागने पर मजबूर किया है । उसी क्षण उसने एक कारिन्दे को चन्दो को ढूढ़ने के लिए भेजा । अपने गमछे से पसीना पोंछते माली दादा भी चले गए । अनुराधा घोर उथलपुथल में घिरी थी चन्दो अपने बचाव के लिए स्वयं भागी है या उसे उठवाया गया है इसी सोच में उसके माथे की नसे तन गई । इस हादसे में उसके पति कुंवर जी की चुप्पी उसके लिए प्रश्न चिन्ह बनी हुई थी । देखती नहीं कैसी पहाड़ जैसी हो गई है क्या कदकाठी निकली है अपने पति के ये वाक्य उसके दिमाग में हथोड़ी की चोट करने लगे कितने भी अच्छे क्यों न हो है तो पुरूष ही। सोचते ही उसके सारे शरीर में सनसनी फैल गई, चन्दो के लिए इतने वर्षों तक की मेहनत का यह अंजाम ? कमरे की कुर्सी पर बैठी वह क्षोभ और क्रोध के घूंट पीती रही । अगर कहीं ऐसा हुआ तो मैं किसी को नहीं छोड़ूंगी । वह बड़बड़ाई तभी सामने से उसे कुंवर भुवनेश प्रताप सिंह आते दिखाई दिए, आपकी राय में चन्दो कहां जा सकती है। तुम इतना परेशान क्यों हो ? जैसे गई है वैसे आ जाएगी । यह आप किस आधार पर कह रहे है ? आधार वाधार क्या ? इन लोगों में ऐसा ही होता है । कहकर वह कुछ कागजात देखने लगे । अनुराधा के शक का कीड़ा और कुलबुलाने लगा । प्रमाण सहित सचाई किस तरह पता लगाई जा सकती है वह यही सोचती रही । रात भर उसे नींद नहीं आई । तरह तरह के ख्याल मन में उठते रहे - उसने माली दादा से सारी कुंए और बावड़ी दिखवाए । कहीं उसका पता न चला ।

दोपहर को हवेली में सन्नाटा हो जाता था काम से निबट कर नौकर भी सुस्ताने लगे तभी द्वार पर दस्तक हुई । अनुराधा चौकी - महाराजिन ने दरवाजा खोला - चन्दो थी साथ में अनुराधा के मायके के नौकर रामू काका । महाराजिन ने आंखे तरेरकर चन्दो को देखा वह चुपचाप अनुराधा के कमरे की तरफ बढ़ गई ।

शेष पृष्ठ 20 पर

पर्यावरणीय प्रदूषण

आर०बी० सिंह तोमर

मानव का विकास कई सभ्यताओं एवं संस्कृतियों से गुजरता हुआ अब औद्योगिक युग के चर्मोत्कर्ष पर पहुँच गया है। हमने प्राकृतिक संसाधनों का स्वामित्व ग्रहण करके प्रकृति को विनाश की ओर पहुँचा दिया है। हमारा विकास पर्यावरण के प्रदूषण का पर्याय बनता जा रहा है, जिसे जीवन योग्य निर्मित करने में प्रकृति को करोड़ों वर्ष लगे थे।

पर्यावरण से तात्पर्य परि + आवरण अर्थात् हमारे चारों ओर फैले वातावरण से है। प्रकृति ने अपने सभी अवयवों में सन्तुलन स्थापित करके पर्यावरण का निर्माण किया था। मनोवैज्ञानिकों की मान्यता है कि "व्यक्ति अनुवांशिकता एवं वातावरण का गुणनफल है"। महान् दार्शनिक अरस्तू का कथन है कि "स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मस्तिष्क निवास करता है"। अतः पर्यावरण हमारे अस्तित्व के लिए अभिन्न एवं अनिवार्य है। इसकी शुद्धता एवं सन्तुलन पर ही हमारा स्वास्थ्य एवं जीवन निर्भर है।

प्रदूषण से तात्पर्य दूषित करने से है अर्थात् भौतिक, रासायनिक एवं जैविक रूप से कोई भी ऐसा परिवर्तन जो पर्यावरण के किसी भी अवयव के लिए हानिकारक हो प्रदूषण कहलाता है। मनुष्य ने अपनी विकासोन्मुख आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए प्राकृतिक संतुलन को तिलांजलि देकर उसका अंधाधुन्ध शोषण किया, जिसके परिणामस्वरूप प्रदूषण का जन्म हुआ और जिससे प्रकृति का कोई भी कतरा अछूता नहीं रहा। प्रदूषण के मुख्य प्रकार निम्न है :-

वायु-प्रदूषण

वायु में ऐसे तत्वों का पहुँचना जो जीवन के लिए किसी भी रूप में हानिकारक हो, वायु-प्रदूषण कहलाता है। धुंआ, धूल, कार्बन, सीसा, कैडमियम, कार्बन डाई आक्साइड, कार्बन मोनो डाई आक्साइड, सल्फर डाई आक्साइड, नाइट्रिक आक्साइड इत्यादि मुख्य प्रदूषक हैं। वायु प्रदूषण के निम्न कारण है :-

प्रत्येक प्राणी सांस लेता है। एक स्वस्थ व्यक्ति एक दिन में लगभग 22 हजार बार सांस लेता है अर्थात् लगभग 35 पौण्ड हवा प्रतिदिन। इस प्रकार वह लगभग 12 हजार पौण्ड हवा प्रतिवर्ष अपने फेफड़ों से बाहर निकालता और 60 वर्ष की औसत उम्र में 720 हजार पौण्ड शुद्ध वायु को अशुद्ध कर देता है। इस प्रकार मनुष्य जब से जन्म लेता है तब से जीवन के अन्तिम क्षणों तक अविराम रूप से जीवनदायनी ऑक्सीजन को कार्बन डाई ऑक्साइड में बदलता है। अतः जब से सृष्टि हुयी केवल मनुष्य ने कितनी वायु को दूषित किया इसका अनुमान भी नहीं लगाया जा सकता है।

भोजन पकाने के लिए उपलों, लकड़ियों, कोयले, मिट्टी के तेल तथा खाना पकाने की गैस का प्रयोग किया जाता है। अनुमान है कि देश में उपलों के रूप में लगभग 500 करोड़ टन गोबर जला दिया जाता है। राष्ट्रीय कृषि आयोग के अनुसार देश में जलाऊ लकड़ी की खपत 1990 में 320 लाख घन-मीटर हुयी। इस प्रकार भोजन पकाने के साधनों से होने वाले वायु प्रदूषण का कुछ अनुमान लगाया जा सकता है।

विभिन्न प्रकार के उद्योगों जैसे- धातु गलाने वाले, तेलशोधक कारखानों इत्यादि की चिमनियों से रात-दिन विषैली गैस निकलती रहती है जिनके कुप्रभाव को जीवधारी ही नहीं बल्कि पहाड़-पत्थर भी सहन करने में अक्षम हैं। उदाहरण के लिए मथुरा तेल शोधक कारखाने की गैस से 60 कि०मी० दूर स्थित ताजमहल का स्वरूप बदलता जा रहा है। अतः इससे इन कल-कारखानों की गैसों के प्रदूषण की प्रचण्डता और व्यापकता का अनुमान लगाया जा सकता है।

परिवहन के स्वचालित साधनों से निकलने वाला धुआं पर्यावरण के लिए एक बड़ा खतरा है। इस धुंए के साथ अदृश्य विषाक्त कण होते हैं जिनका व्यास मात्र तीन मियू (3μ) या इससे भी कम होता है। ये कण स्वास नली से होते हुए हमारे फेफड़ों में गहरे चुभ जाते हैं। विभिन्न रंगों के इस धुएं में सामान्यतया सल्फर डाई आक्साइड, नाइट्रिक आक्साइड, हाइड्रोकार्बन, कार्बन डाई आक्साइड, कार्बन-मोनो-आक्साइड एवं सूक्ष्म कण होते हैं। स्वचालित वाहनों द्वारा 1 गैलन पेट्रोल के दहन से 14 पौण्ड नाइट्रिक आक्साइड व 3 पौण्ड कार्बन मोनो आक्साइड तथा अन्य गैसें निकलती हैं। कार्बन मोनो

आक्साइड रक्त कणों से मिल जाती हैं । वे 12 घण्टे तक आक्सीजन ग्रहण करने योग्य नहीं रह जाते है, जिससे फेफड़ों को पूर्ववत आक्सीजन की प्राप्ति के लिए अधिक कार्य करना पड़ता है । इस प्रकार हम परिवहन के साधनों द्वारा न केवल तीव्रगति से एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुँचते हैं बल्कि उससे भी अधिक गति से उग्र घटाव व रोगों की ओर दौड़ रहे हैं। अतः वे हमारी गति के साथ-साथ दुर्गति के भी साधन हैं ।

जल-प्रदूषण

कोई भी ऐसी क्रिया जिससे जल की ऐच्छिक उपयोगिता का ह्रास हो, जल-प्रदूषण कहलाती है । जल प्रदूषण के निम्न कारण हैं ।

जलाशयों एवं नदियों में दैनिक क्रियाकलापों से निकले व्यर्थ पदार्थों को बहा दिया जाता है । जिसमें घरेलू कूड़ा-करकट,झूठन का अवशिष्ट, जानवरों का मल-मूत्र, उनके साथ मनुष्यों के मृतक शरीर, शहरों का सीवेज तथा गन्दे नालों का कचरा होता है । परिणामतः देश की अधिकांश नदियों का जल दूषित है जिससे शुद्ध जल की समस्या दिनोंदिन विकराल रूप धारण करती जा रही है ।

विभिन्न प्रकार की औद्योगिक इकाइयाँ अपने अवशिष्ट पदार्थों को नदियों, तालाबों एवं झीलों में बहा देती हैं, जिससे औद्योगिक क्षेत्र के समीप नदियों के पानी का रंग तक बदल जाता है, औद्योगिक अवशिष्ट में अम्ल, क्षार, लवण धातुओं के सूक्ष्म कण तथा विषैली गैसें घुली रहती है । इसी के कारण विभिन्न प्रकार की बीमारियों के प्रसार का कार्य ये जलस्रोत करते हैं ।

हरित क्रान्ति का आधार उर्वरक अन्ततोगत्वा पानी में ही शरण पाता है । पौधों से बचा हुआ उर्वरक रिसाव की क्रियासे पानी के स्रोतों में पहुँच जाता है । हमारे देश में प्रतिवर्ष लगभग 90 लाख टन उर्वरकों का प्रयोग किया जाता है । इसके द्वारा पानी के प्रदूषित होने का अनुमान आसानी से लगाया जा सकता है ।

सभी कीटनाशी एवं खरपतवारनाशी जहर होते हैं । ये प्रयोग के कुछ समय बाद जल स्रोतों में पहुंच जाते हैं । इनकी उपस्थिति में पानी किसी भी जीवधारी के पीने योग्य नहीं रह जाता है, तथा जलीय जीव-जन्तुओं के शरीर में इसकी मात्रा एकत्रित होने लगती है जिसका प्रभाव मानव स्वास्थ्य पर भी पड़ता है। देश में प्रतिवर्ष लगभग 72 हजार टन कीट व खरपतवार नाशी प्रयोग किये जाते हैं जिससे जलीय जीव-जन्तुओं की संख्या में दिनोंदिन कमी होती जा रही है ।

कपड़ों एवं शरीर की सफाई के लिए अपमार्जक (धुलाई के पाउडर एवं साबुन) पदार्थों को प्रयोग में लाया जाता है जो सफाई के बाद जल स्रोतों में ही रह जाते हैं । ये अपमार्जक पानी को दूषित करने के साथ-साथ उसके ऊपर एक पतली परत का निर्माण करते हैं जिससे पानी में आक्सीजन की कमी हो जाती है और जलीय वनस्पतियों को प्रकाश संश्लेषण के लिए समुचित मात्रा में प्रकाश न मिलने के कारण यह क्रिया अवरुद्ध हो जाती है ।

ताप विद्युत संयंत्रों को ठण्डा करने के लिए जिस पानी का प्रयोग किया जाता है उसे गर्म अवस्था में ही बहा दिया जाता है जिससे जलस्रोत के सम्पूर्ण जल का तापक्रम बढ़ जाता है । बहाये गये जल के साथ ही इन संयंत्रों से निकलने वाली राख भी कुछ मात्रा में बहकर जल स्रोतों में मिल जाती है । परिणामतः जल स्रोत का पानी पीने, स्नान करने, जलीय जीव-जन्तुओं के रहने तथा जलीय वनस्पतियों के विकास योग्य नहीं रह जाता है ।

खनिज तेलों को बड़े जलयानों के द्वारा समुद्र मार्ग से स्थानांतरित किया जाता है । इस प्रकार के जलयान जब दुर्घटनाग्रस्त होते हैं तो करोड़ों बैरल तेल समुद्र में फैल जाता है । यह तेल समुद्र के पानी की सतह पर एक पतली परत के रूप में मीलों फैलता है जिससे इससे नीचे आक्सीजन और सूर्य का प्रकाश नहीं पहुँच पाता है, परिणामतः सैकड़ों वर्ग कि०मी० में फैले जलीय पौधे "फाइटोप्लन्कटन" प्रकाश संश्लेषण की क्रिया नहीं कर पाते और धीरे-धीरे सड़-गल कर नष्ट हो जाते हैं । इस प्रकार खनिज तेल द्वारा जल प्रदूषण से इन वनस्पतियों द्वारा उत्पादित ऑक्सीजन की पूर्ति भी रुक जाती है ।

खाड़ी युद्ध में खनिज तेल को सामरिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए स्वतन्त्र रूप से क्षमता के अनुसार बहाया और जलाया गया जिससे समुद्र की सतह पर खनिज तेल हजारों वर्ग कि०मी० क्षेत्र में फैल गया । परिणामतः उस क्षेत्र के अनगिनत जलीय जीव-जन्तुओं की जीवन-लीला समाप्त हो गयी । जलते हुए खनिज तेल के स्रोतों से निकलने वाले धुएँ ने उस क्षेत्र में वायुमण्डल के संगठन (कम्पोजीशन) को ही बदल डाला जिसका प्रभाव दूर-दूर तक व्यापक रूप से पड़ रहा है ।

ध्वनि प्रदूषण

वह क्रिया जिसमें ऐसी ध्वनि निकले जो हमारे कानों को अप्रिय एवं कर्कश लगे, ध्वनि प्रदूषण कहलाती है। ध्वनि को डेसीवल से नापा जाता है, फुसफुसाहट की आवाज 10 से 25 डेसीवल, धीमा रेडियो 30-40, वार्तालाप 50-60, हल्का यातायात 70-80, भारी यातायात 100-110, मोटर हार्न 110-115 और रेलगाड़ी का शोर 110 से 140 डेसीवल होता है । 60 डेसीवल से अधिक की ध्वनि हमारे लिए हानिकारक हो सकती है । 150 डेसीवल की ध्वनि हमें बहरा और 155 डेसीवल की ध्वनि त्वचा में जलन उत्पन्न कर सकती है । 180 डेसीवल की ध्वनि मनुष्य को मृत्यु की गोद में सुला सकती है । इसी आधार पर विकसित देशों में मारक अस्त्रों का निर्माण किया गया है । सर्वेक्षणों से ज्ञात हुआ हैकि देश के महानगरों का शोर गत 20 वर्षों में आठ गुना बढ़ गया है यदि इसी गति से बढ़ता रहा तो आगामी शताब्दी में शहरों की आधे से अधिक आबादी बहरी हो जाने की सम्भावना है ।

विभिन्न प्रकार के यात्री एवं माल वाहक स्वचालित वाहन अपने ध्वनि सामक यन्त्रों की खराबी तथा सावधान करने के लिए अनियंत्रित कर्कश ध्वनि के अविवेकपूर्ण प्रयोग से ध्वनि प्रदूषण करते हैं । इस प्रकार के वाहनों की संख्या बढ़ने और रख-रखाव में कमी आने से ध्वनि प्रदूषण तीव्रगति से बढ़ा है । कोयले से चलने वाले रेल इंजन ध्वनि प्रदूषण फैलाने का कार्य दिन-रात करते हैं ।

कल-कारखानों के चलने से उत्पन्न घर-घराहट की आवाज मीलों दूर तक सुनाई देती है। अतः ध्वनि प्रदूषण इनका उप-उत्पाद है । घनी बस्तियों के बीच स्थापित आरा मशीनों, खराद मशीनों, पिसाई दराई की मशीनों से जो ध्वनि उत्पन्न होती है वह दीवारों से टकराकर प्रतिध्वनि उत्पन्न करती है । इस प्रकार घनी बस्तियों में ध्वनि प्रदूषण प्रतिध्वनि प्रदूषण भी उत्पन्न करता है ।

रेडियो, टी०वी०, स्टीरियो, लाउडस्पीकर और बैंडबाजे इत्यादि ध्वनि प्रसारक यन्त्रों की अपरिमित संख्या और अनियन्त्रित ध्वनि के प्रयोग की मनोवृत्ति ने ध्वनि प्रदूषण को सैद्धांतिक बना दिया है । इसी का परिणाम है कि आज गूंगों, बहरों, पागलों एवं चिड़चिड़े लोगों की संख्या में तेजी से वृद्धि हो रही है ।

विवाह एवं खुशियों के अवसर पर लोग अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति के लिए पटाखे, फुलझड़ियों व विभिन्न प्रकार की अन्य आतिशबाजी को अपनी समृद्धि का मापदण्ड मानकर यथासंभव प्रयोग करके ध्वनि प्रदूषण फैलाते हैं । दशहरा और दीपावली के शुभ अवसरों पर छोटे-बड़े पटाखे दागे जाते हैं जिससे हजारों बच्चे अन्धे एवं अपाहिज हो जाते हैं और ध्वनि प्रदूषण का कुप्रभाव पूरे समाज को भोगना पड़ता है ।

वर्तमान समय में अल्फ्रेडबर्नार्ड नोबेल द्वारा निर्मित शक्तिशाली विस्फोटक डायनामाइट और बेलिस्टाइड से ही नहीं बल्कि परमाणु विखण्डन और परमाणु संलयन से भी विस्फोट किया जाता है । जिसकी गर्जना व आर्तनाद से ओजोनमण्डल में दरारें पड़ जाती हैं । अतः ध्वनि प्रदूषण की भयंकरता, व्यापकता और सांघातिकता का अनुमान लगाना असम्भव है ।

प्रदूषण के परिणाम

प्रदूषण के परिणाम भयावह, हृदय विदारक एवं सर्वव्यापी होंगे । इसकी विनाशलीला का अनुमान निम्नवत है :-

पृथ्वी के तापक्रम को कार्बन डाई आक्साइड नियन्त्रित करती है । कार्बन डाई आक्साइड की परत सूर्य के विकरण के लिए पारगम्य होती है । अतः सूर्य की पराबैंगनी (अल्ट्रा वायलेट) तथा अवरक्त (इन्फ्रारेड) किरणें वायुमण्डल में विद्यमान कार्बन डाई आक्साइड की परत को भेद कर पृथ्वी पर आ जाती है परन्तु धरातल की उष्मा इस परत को भेदकर अन्तरिक्ष में नहीं जा पाती । इस कारण वातावरण गर्म हो जाता है। कार्बन डाई आक्साइड के इस प्रभाव को वैज्ञानिक "पौध घर प्रभाव" (ग्रीन हाउस इफेक्ट) कहते हैं । वैज्ञानिकों का अनुमान है कि वायु-मण्डल में इस गैस की मात्रा लगभग 0.03 प्रतिशत है । लेकिन प्रदूषण के कारण अगली शताब्दी के अन्त तक इसकी मात्रा बढ़ कर 0.07 प्रतिशत हो जायेगी । जिससे विषुवत रेखीय क्षेत्र का तापक्रम 10° से० और ध्रुवी क्षेत्र का तापक्रम 4.5 से 7° से 1° तक बढ़ जाने की सम्भावना है । अतः पृथ्वी का औसतन 3° से. तापक्रम बढ़ जायेगा । उपर्युक्त तापक्रम बढ़ने से आर्कटिक महासागर की सम्पूर्ण बर्फ पिघल जायेगी तथा ग्रीन लैंड व अंटार्कटिका की बर्फ धीरे-धीरे पिघल कर समुद्र में आ जायेगी जिससे 21वीं शताब्दी के अन्त तक समुद्र का जलस्तर 5 से 7 मीटर उठ जायेगा । परिणामतः पृथ्वी के अनेक निचले हिस्से डूब जायेंगे । इस क्षेत्र में विश्व की लगभग 30 प्रतिशत जनसंख्या आबाद है ।

वायुमण्डल में उपस्थित सल्फर डाई आक्साइड पानी के साथ संयोग करके सल्फ्यूरिक अम्ल (तेजाब) बनाती है जिससे तेजाबी वर्षा होती है । बम्बई तथा ट्राम्बे में वर्षा जल का

पी०एच० 4.85 पाया गया है। राजस्थान के औद्योगिक नगर कोटा में वैज्ञानिकों ने तेजाबी वर्षा होने की सम्भावना व्यक्त की है। औद्योगिक रूप से विकसित देशों तेजाबी वर्षा हो रही है। जिसके विनाशकारी परिणाम सामने आने लगे हैं। जल स्रोतों में अम्ल की अधिकता के कारण पेयजल की समस्या और मत्स्य पालन को खतरा उत्पन्न हो गया है। इससे प्रभावित क्षेत्रों की भूमि धीरे-धीरे अम्लीय होती जा रही है। जिससे पौधे असमय में मर जाते हैं। विश्व प्रसिद्ध 'स्टेच्यू आफ लिबर्टी' तेजाबी वर्षा के कारण टूट गयी थी। इसी प्रकार विश्व के विभिन्न ऐतिहासिक स्थल प्रदूषण के शिकार होकर अपनी आभा दिनोंदिन खोते जा रहे हैं।

वायु के समतापमण्डल में उपस्थित लगभग ३० कि०मी० मोटी ओजोन की परत है जो सूर्य के विनाशकारी पराबैंगनी विकरण को पृथ्वी में पहुँचने से पहले ही शोषित कर लेती है। यह परत जीवन रक्षक छतरी का कार्य करती है। परन्तु प्रदूषण के कुप्रभावों ने इस परत की न केवल मोटाई व सान्द्रता को घटाया है बल्कि अन्टार्कटिका महाद्वीप के ऊपर इसमें एक छेद भी कर दिया है। इस परत के छिन्न-भिन्न होते ही पराबैंगनी विकरण अपनी विनाशलीला का ताण्डव आरम्भ कर देगा। इसकी बौछार से त्वचा की ऊपरी कोशिकाएं क्षतिग्रस्त होंगी और उनसे हिस्टैमीन रसायन निकलेगा जिससे चर्म कैंसर, अल्सर ब्रोंकाइटिस इत्यादि रोग उत्पन्न हो जायेंगे साथ ही आँखों की पुतलियों में घाव एवं सूजन आ जाएगी। इन विकरणों से सूक्ष्म जीव तत्काल मर जायेंगे। पौधों की वृद्धि व प्रकाश संश्लेषण की गति मन्द पड़ जायेगी।

अन्वेषणों से ज्ञात हुआ है कि प्रदूषण के कारण मिट्टी की उर्वरता के ह्रास के साथ ही उसकी संरचना में विभिन्न प्रकार की विसंगतियां एवं विकृतियां भी उत्पन्न हो गयी हैं। इस समय लगभग 15 लाख हेक्टेयर भूमि क्षरण से प्रभावित है। अनुमान है कि वर्षा से प्रतिवर्ष लगभग 700 करोड़ टन उपजाऊ मिट्टी बहकर जल स्रोतों में चली जाती है। दलदल चंगुल में लगभग 200 लाख हेक्टेयर भूमि फंस चुकी है तथा 70 लाख हेक्टेयर भूमि को ऊसर ग्रसित कर चुका है। थार का मरुस्थल अपनी सीमा का अतिक्रमण कर सर्वव्यापी ताण्डव करता हुआ उत्तर प्रदेश, हरियाणा, पंजाब और दिल्ली की ओर तीव्रगति से निरन्तर बढ़ रहा है।

प्रदूषण न केवल मानव के शरीर एवं मानसिक विकास को अवरुद्ध करता है बल्कि गर्भ में पल रहे शिशु में भी विकृतियां उत्पन्न करता है। वायु प्रदूषण से त्वचा, आंखों, फेफड़ों और बच्चों की हड्डियों में विसंगतियां उत्पन्न होती हैं। लगभग सभी संक्रमक रोगों का प्रसार दूषित जल से होता है और पेट के 80 प्रतिशत रोग इसी के कारण होते हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार अविकसित एवं विकासशील देशों में 75 प्रतिशत बच्चों की मृत्यु अशुद्ध जल के पीने से होती है। ध्वनि प्रदूषण का कुप्रभाव मस्तिष्क, कान, हृदय और गुर्दों पर पड़ता है। प्रदूषण का प्रभाव मानव जीवन में स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। लाखों व्यक्ति अपाहिज हो चुके हैं, इससे भी अधिक लोग चिकित्सालयों में रात दिन जीवन के आत्मघाती संघर्ष में जिजीविषा की आशा से लगे हैं और इन सबसे अधिक नवजात शिशु प्रदूषण के ताण्डव से चीत्कार कर अपनी जीवन लीला समाप्त कर रहे हैं। अतः यदि हम प्रकृति के नियमों के अनुकूल विकास की पद्धति को अपनाते हैं तो हमारी उत्तर जीविता सुरक्षित रहेगी अन्यथा डायनासौर की तरह हम भी पृथ्वी से विलुप्त हो जायेंगे।

प्रदूषण को रोकने के उपाय

प्रदूषण से बचने के लिए प्राकृतिक संसाधनों के अनियन्त्रित दोहन की प्रवृत्ति एवं प्रदूषण युक्त प्रौद्योगिकी में ऐसा परिवर्तन करना होगा जो कि न केवल प्रदूषण के प्रभावों को निष्क्रिय कर दें बल्कि उन्हें पुनः उपयोगी भी बना दें।

दैनिक कार्यों के सम्पादन के लिए सौर ऊर्जा का उपयोग किया जाए। मनुष्य विभिन्न कार्यों के लिए एक वर्ष में जितनी ऊर्जा का उपयोग करता है। उतनी ऊर्जा सूर्य पृथ्वी को प्रति दिन प्रदान करता है इसे समुचित रूप से उपयोग में लाने के लिए पर्याप्त मात्रा में शोध कार्य किया जाना चाहिए। यदि खाना पकाने के लिए उपलों, लकड़ियों और कोयले का उपयोग करना ही पड़े तो धूम्र रहित चूल्हों में ही इसका प्रयोग किया जाए तथा प्रैशर कुकर में ही खाना पकाया जाए।

औद्योगिक इकाइयों से निकलने वाले अवशिष्टों को एकत्रित कर उनकी अवस्था एवं गुणों में परिवर्तन कर उन्हें पुनः उत्पादन व उपभोग में लाया जाए। औद्योगिक इकाइयों को परिपूरक (कम्लीमेन्ट्री) रूप में विकसित किया जाए। उदाहरण के लिए जिन उद्योगों की इकाइयों को ठण्डा करने के लिए पानी का उपयोग किया जाता है उनके साथ ही ऐसे उद्योगों की स्थापना की जाए जिन्हें उत्पादन के लिए गर्म पानी की आवश्यकता पड़ती है ताकि एक उद्योग का अवशिष्ट (गर्म पानी) दूसरे उद्योग का उत्पादन साधन बन सके। अपरिहार्य कारणों से बचे अवशिष्ट पदार्थ को प्रदूषण रहित करके ही छोड़ा जाए एवं उन्हें

उपयोग में लाने के लिए शोध कार्य करके नई प्रौद्योगिकी विकसित की जाए।

औद्योगिक इकाइयों और स्वचालित वाहनों में प्रयोग होने वाले ईंधन (फ्यूल) में ऐसे परिवर्तन किये जाएं कि इनसे निकलने वाली गैसें आपस में क्रिया करके इस प्रकार के यौगिकों में परिवर्तित हो जाएं जो किसी भी क्षेत्र में पुनः उपयोग में आ सकते हों और साथ ही अप्रदूषक हों। मशीनरी में परिवर्तन कर गैसों को ऐसे प्रकोष्ठ (चेम्बर) से होकर बाहर निकाला जाए जिसमें आवश्यक दाब, ताप और उत्प्रेरकों का प्रयोग किया गया हो, परिणामतः गैस में उपस्थित गंधक नाइट्रोजन कार्बन तथा अन्य तत्व इसी प्रकोष्ठ में प्रदूषण मुक्त उपयोगी पदार्थ में बदल जायेंगे। इस प्रकार औद्योगिक इकाइयों और स्वचालित वाहनों से होने वाले प्रदूषण को सफलता पूर्वक रोका जा सकता है।

मशीनरी की विद्युत, रासायनिक और यान्त्रिक ऊर्जा को ध्वनि ऊर्जा में परिवर्तित होने से रोकने के लिए इनमें तकनीकी परिवर्तन की आवश्यकता है। घर्षण न्यूनतम हो इसके लिए मशीनरी के रख-रखाव पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। ध्वनि सामक यन्त्रों का यथोचित रूप से प्रयोग किया जाए। वाहनों के हार्नों को तभी प्रयोग किया जाए जब इनका प्रयोग अपरिहार्य हो। बैंडबाजों, लाउडस्पीकरों, स्टीरियो इत्यादि की ध्वनि प्रसारक क्षमता को नियन्त्रित करके, पटाखों तथा उच्च ध्वनि वाले विस्फोट को कानूनन प्रतिबन्धित कर दिया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त सार्वजनिक स्थानों पर ध्वनि प्रसारक यन्त्रों के प्रयोग के लिए जिलाधीश से स्वीकृति लेना अनिवार्य बनाया जाए। इस प्रकार ध्वनि प्रदूषण को नियन्त्रित करने में सफलता मिल सकती है।

रासायनिक उत्पादों जैसे—उर्वरक, कीटनाशक और अपमार्जक (धुलाई पाउडर एवं साबुन) की संरचना एवं संगठन में ऐसा परिवर्तन किया जाए कि उपयोग के कुछ समय बाद ये स्वयं ही निष्क्रिय हो जाएं, जिससे जल और मृदा में इनसे प्रदूषण नहीं होगा। रासायनिक उर्वरकों के स्थान पर जैविक उर्वरकों (ग्रीन हरित शैवाल, एजोला) जैविक कल्चर (राइजोबियम, अजोटोबैक्टर), जैविक खादों (गोबर की खाद, कम्पोसट तथा हरी खाद) का प्रयोग किया जाए। कीटों व खरपतवारों का रासायनिक नियन्त्रण न करके जैविक व यान्त्रिक नियन्त्रण किया जाए।

औद्योगिक अवशिष्टों को जलस्रोतों में डालने पर पूर्ण प्रतिबन्ध लगाया जाना चाहिए। इससे ऊर्जा उत्पादित की जाए अथवा अन्य किसी उपयोगी कार्य में लगाने के लिए नई प्रौद्योगिकी का विकास किया जाए। घरेलू कूड़ा-करकट एवं मल-मूत्र भूमि की उत्पादकता को बढ़ाने के लिए आवश्यक हैं अतः इसे खेतों में ही डाला जाए। इससे न केवल जलस्रोत प्रदूषण से मुक्त होंगे बल्कि मिट्टी की संरचना में सुधार एवं मित्र जीवाणुओं की संख्या और भूमि की उर्वरा शक्ति में वृद्धि भी होगी। इससे एक ओर प्रदूषण से मुक्ति मिलेगी और दूसरी ओर भूमि से शारीरिक वृद्धि के लिए हमने जो कुछ भी लिया था उसे पुनः उसी को लौटाकर हम ऋण मुक्त हो जाएंगे। इस प्रकार प्रदूषण रुकेगा और भूमि की उर्वरता भी बढ़ेगी।

खनिज तेल वाहक जहाजों की सुरक्षा के व्यापक एवं समुचित प्रबन्ध किये जाने चाहिये। तेल को बड़े-बड़े ड्रमों में भरकर ही जहाजों में लादा जाए जिससे जलपोतों के क्षतिग्रस्त होने पर भी तेल को समुद्र में फैलने से बचाया जा सके। प्रदूषण को रोकने एवं ऊर्जा के प्रमुख साधन को नष्ट होने से बचाने के लिए संयुक्त-राष्ट्र संघ को प्रभावशाली नियम बनाने चाहिये। जिसके तहत दुर्घटनाग्रस्त तेल वाहक जहाज की मदद के लिए निकटतम राष्ट्र बाध्य हो तथा युद्ध काल में भी इन जहाजों एवं इनके स्रोतों को ध्वस्त करना प्रतिबन्धित हो। इन नियमों का उल्लंघन करने वाले राष्ट्रों के विरुद्ध संयुक्त राष्ट्र संघ की सुरक्षा परिषद् के माध्यम से कड़ी कार्यवाही की जानी चाहिए।

बड़े बांध बनाने के लिए अधिकृत क्षेत्र से प्रवास करने वाले जीव-जन्तुओं के रहन-सहन के लिए तथा उस क्षेत्र में उजड़ने वाली वनस्पतियों के प्रभाव को सन्तुलित करने के लिए अभयारण्य स्थापित किये जाएं। बांध के चारों ओर अभयारण्य की चौड़ाई का निर्धारण पर्यावरण विशेषज्ञों द्वारा कराया जाए तथा प्रत्येक दशक के बाद उस क्षेत्र के पर्यावरणीय सन्तुलन का मूल्यांकन कर उसमें समन्वय स्थापित किया जाना चाहिए।

कोयला, अभ्रक, लौह अयस्क, डोलामाइट इत्यादि खानों की खुदाई आरम्भ करने से पूर्व भूगर्भशास्त्रियों से पर्यावरण में पड़ने वाले प्रभाव के सम्बन्ध में पर्याप्त विचार विमर्श करके उसे सन्तुलित करने का यथासम्भव प्रयास किया जाए। खनन क्षेत्र को कई भागों में विभाजित कर खुदाई की जाए तथा जिन भागों की खुदाई पूर्ण हो चुके उसे सर्वप्रथम प्राकृतिक उद्यानों में परिवर्तित कर दिया जाए। सम्पूर्ण क्षेत्र की खुदाई के उपरान्त इस क्षेत्र को राष्ट्रीय उद्यान घोषित कर दिया जाना चाहिये।

प्रदूषण को रोकने के उपर्युक्त उपायों के अतिरिक्त पर्यावरण को शुद्ध करने की व्यवस्था करनी होगी क्योंकि प्रदूषण को

जो एक अत्यंत घातक कदम है । सामान्यतः एक वर्ष में 5 लाख टन सीवेज उत्पन्न होता है जिसका अधिकांश भाग समुद्र व नदियों में पहुंचता है । एक सर्वेक्षण के अनुसार भारत में 1 लाख से ज्यादा आबादी वाले 142 शहरों में से केवल 8 ऐसे शहर हैं जिनमें सीवेज को ठिकाने लगाने की पूर्ण व्यवस्था है, 62 ऐसे शहर हैं जहां थोड़ी बहुत व्यवस्था है, एवं 72 ऐसे शहर है जहां इसकी कोई व्यवस्था नहीं है । जल में मानव-मल मूत्र आने का आशय है, डिकम्पोजिटर बैक्टीरिया के लिये अतिरिक्त भोजन का आगमन, जो पानी की ऑक्सीजन का बहुत बड़ा भाग प्रयोग में ले लेते हैं जिससे जलीय जंतुओं व पादपों पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है ।

औद्योगीकरण के कारण कल-कारखानों के जहरीले रासायनिक व्यर्थ के पदार्थों ने भी नदियों की जीवन दायिनी शक्ति को प्रायः समाप्त कर दिया है । आज भारत की लगभग 70% नदियां पर्यावरण के दृष्टिकोण से संकट के घेरे में हैं । इनमें भारत की प्रमुख नदियां गंगा, यमुना, दामोदर, सोन, कावेरी, कृष्णा, नर्मदा, माही आदि शामिल हैं । आज भारतीयों की मुख्य धार्मिक नदी गंगा का 23% भाग प्रदूषित हो चुका है । सन् 1984 में यमुना नदी में मात्र दिल्ली शहर से प्रतिदिन 3,20,000 कि०लि० मलमूत्र व गंदा पानी मिलता था । वाराणसी के विश्व प्रसिद्ध दशाश्वमेध घाट से बहने वाली गंगा का जल जलीय प्रदूषण के कारण अपेय व हानिकारक हो गया है । दामोदर नदी में 40 लाख गैलन विषैला पानी कल-कारखानों द्वारा छोड़ा जाता है । मद्रास शहर से लगभग 2 करोड़ गैलन पानी गंदगी बहकर नदियों को अशुद्ध करती है । श्रीनगर का 51000 कि०ली० गंदा पानी सीधा झेलम में मिलता है । जल में प्रवाहित की जाने वाली इस गंदगी का कारण जहां सन् 1940 में एक लीटर जल में 2.5 घन मी ऑक्सीजन पाई जाती थी वह घटकर अब मात्र 0.1 घनमीटर रह गई है । यही नहीं भारत के 2600 शहरी क्षेत्रों में से केवल 200 क्षेत्रों में एवं 5,76,000 ग्रामीण क्षेत्रों में मात्र 64,000 क्षेत्रों में सामान्य से कुछ अच्छा जल पीने हेतु उपलब्ध है । जल प्रदूषण के कारण ही भारत में हैजा, टाइफाइड, पेचिस, पोलियो, पीलिया, उदर रोग, कब्ज से बहुत अधिक व्यक्ति ग्रसित पाये जाते हैं । उदाहरण के लिये देश के केवल 3400 गांवों के लगभग 2.5 करोड़ आदमी आज भी हैजे से पीड़ित हैं जो जल प्रदूषण की बर्बरता को दर्शाती है ।

समुद्री जल प्रदूषण का एक मुख्य कारण तैलीय प्रदूषण भी है । विश्व में लगभग डेढ़ अरब टन तेल का यातायात प्रतिवर्ष होता है जिसके कारण जल में तैलीय प्रदूषण फैलता है । मेसाजुसेट्स इन्स्टीट्यूट ऑफ टेक्नॉलोजी के अनुसार "प्रतिवर्ष बीस लाख टन तेल विभिन्न दुर्घटनाओं या असावधानियों के कारण समुद्र में बह जाता है । तैलीय प्रदूषण के परिणामस्वरूप जीवों की तीव्रगति से मृत्यु होती है क्योंकि तेल हल्का होने के कारण जल पर फैल जाता है जिससे जंतु जल व वायु के बीच आदान प्रदान नहीं कर पाता है व नष्ट हो जाता है । इसी प्रकार कच्चा तेल काला होने से सूर्य की रोशनी पानी तक नहीं पहुंच पाती है फलतः शैवाल व अन्य पौधे प्रकाश संश्लेषण की क्रिया नहीं कर पाते हैं । जल में तैलीय प्रदूषण कितना फैल गया है इसके लिये अमेरिका की क्वाहोगा नदी का उदाहरण दिया जा सकता है जिसमें एक बार अत्यधिक प्रदूषण के कारण आग लग गई थी, इसी कारण उसे ज्वलनशील नदी की संज्ञा दी जाने लगी । भारतीय संदर्भ में मुंगेर के पास गंगा में तेल शोधक कारखाने के कारण आग लग गई थी जिससे बहुत बड़ा नुकसान हुआ था ।

आज जल प्रदूषण के दुष्परिणामों की विश्व झलक देखें तो जापान का उदाहरण सर्वोत्तम रहेगा जहां के टोकियो शहर के आस-पास जल प्रदूषण इतना अधिक हो गया कि उस जल में फोटोग्राफ विकसित किया जा सकता है । वहां के योकाईची नगर में काफी बड़ी संख्या में लोग श्वास रोग से पीड़ित हो चुके हैं । जीत्सू नदी के किनारे होंमू द्वीप के निवासियों में एक नई बीमारी उत्पन्न हो गई है जिसमें लोगों की अस्थियां इतनी भंगुर हो गई हैं कि थोड़े से छू देने से ही वे टूट जाती हैं । इस प्रकार मिना माटा के नजदीक बहुत से लोगों की आंखों की ज्योति चली गई, मस्तिष्क विकृत हो गया, पैर टूट गये । भारत में सन् 1951 से 1956 के मध्य यमुना नदी में फैले भारी प्रदूषण से 40 हजार व्यक्ति एवं 1978 में बम्बई के जल प्रदूषित होने पर 2000 व्यक्ति पीलिया से ग्रसित हो गये थे ।

यदि विश्व में जल प्रदूषण की यही दर कायम रही तो आनेवाले युग में पीने का पानी व खेतों में दिया जाने वाला पानी विषाक्त एवं प्रदूषित होगा । फलतः उत्पादन कम होगा, भुखमरी, बीमारियां, महामारियां फैलेंगी तथा जिन समुद्रों व नदियों से अमृत एवं रत्न निकलते थे वहां से विष व सड़ांध के अंबार मिलेंगे जो विश्व को तेजी से मृत्यु की ओर ले जायेगी ।

प्रवक्ता, अर्थशास्त्र
वनस्थली विद्यापीठ
वनस्थली, टोंक
(राजस्थान)

संत-पुरुष डॉ० राजेन्द्र प्रसाद

रामजी प्रसाद सिंह

भारत माता ने 19वीं सदी के अंत में, अनेक विभूतियां पैदा कीं । इनके सम्मिलित प्रयास से, न केवल भारत स्वाधीन हुआ, बल्कि स्वाधीनता की लड़ाई लड़ने वाली दुनिया की सभी शक्तियों को सहारा मिला ।

साम्राज्यवादी शक्तियों का शांतिपूर्ण तरीके से मुकाबला करने का आदर्श पेश कर, भारत के स्वाधीनता-सेनानियों ने सारे संसार में एक ऐसी ज्योति फैला दी, जिसकी रोशनी का सहारा लेकर असंख्य छोटे-छोटे देश परतंत्रता की बेड़ियों को तोड़ने में सफल हो गये ।

इसका श्रेय महात्मा गांधी के बाद, जिस दूसरे महात्मा को जाता है, वे हैं, डॉ० राजेन्द्र प्रसाद । इन्हें सारे देशवासी 'देश-रत्न' कहा करते थे । वे सचमुच देश-रत्न थे । इसलिये नहीं कि वे दो बार भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अध्यक्ष बने थे, इसलिए भी नहीं कि वे भारत के प्रथम राष्ट्रपति थे । उन्हें 'देश-रत्न' कहा जाता था, क्योंकि वे भारतीय संस्कृति के मूर्तिमान् स्वरूप थे । सर्वोच्च शिखर पर आसीन होने के बावजूद, व्यक्तिगत जीवन में वे अकिंचन बने रहे । राष्ट्रपति भवन में भी वे एक साधारण व्यक्ति की तरह रहते थे । बोल-चाल, रहन-सहन, भाषा और व्यवहार से वे एक साधारण किसान की तरह प्रतीत होते थे । हिन्दी भाषी लोगों से वे अक्सर भोजपुरी में बातें करते थे । उनके समय में राष्ट्रपति भवन का दरवाजा आम लोगों के लिए खुला था; जो भी मिलना चाहता था, उनसे अवश्य मिल लेता था ।

आपने अद्भुत सहनशक्ति पायी थी । किसी ने उनको कभी न क्रोध में देखा और न कभी प्रायश्चित करते । उन्होंने अपने को पुरातन-पंथी कहलाना मंजूर किया, किंतु अपनी सांस्कृतिक विरासत नहीं छोड़ी ।

ऐसी बात नहीं थी कि डॉक्टर राजेन्द्र प्रसाद को किसी के

साथ मतभेद नहीं था परन्तु अपने मतभेदों को उन्होंने शत्रुता में परिवर्तित नहीं होने दिया । इसी कारण उन्हें भारतीय राजनीति का अजातशत्रु कहा जाता था ।

उनका सबसे पहला मतभद अपने बड़े भाई से हुआ । पिता तुल्य बड़े भाई ने अपनी गाढ़ी कमाई का धन लगाकर उन्हें ऊंची शिक्षा दिलाई थी । वे चाहते थे कि उनका अनुज, सरकार में ऊंची नौकरी करके घर-गृहस्थी का भार संभालेगा किंतु, राजेन्द्र बाबू ने उन्हें सविनय समझा दिया कि धन कमाने के बजाय उन्होंने राष्ट्र और समाज की सेवा करने का व्रत लिया है । उनके प्रथम सत्याग्रह के समक्ष सम्पूर्ण परिवार ने हार मान ली ।

डॉक्टर राजेन्द्र प्रसाद ने पटना में वकालत शुरू की लेकिन इस पेशे में उतना ही समय देते थे, जितना समय वे राष्ट्र-कार्य से बचा पाते थे । 1917 में महात्मा गांधी चम्पारण (उत्तरी बिहार) पहुंचे । नील की खेती करने वाले अंग्रेज जमींदारों का, चम्पारण के किसानों पर अत्याचार देखा तो वे दहल गये । अंग्रेजों ने नाजायज तरीके से चम्पारण के किसानों की जमीन छीन ली थी । अतएव, गांधीजी ने किसानों के हक की लड़ाई लेने का फैसला किया । उस लड़ाई में डॉक्टर राजेन्द्र प्रसाद, उनका दाहिना हाथ बने ।

वास्तव में, चम्पारण पहुंचने के पहले गांधी जी, पटना में राजेन्द्र प्रसाद के घर गये उनसे सलाह करने । परन्तु राजेन्द्र बाबू उस समय पटना में नहीं थे । उनके नौकर से गांधी जी को न पहचानने के कारण उपेक्षा हो गयी ।

राजेन्द्र बाबू को, ज्यों ही, इसकी जानकारी हुई, वे तुरन्त चम्पारण गये और उसके बाद आजीवन महात्मा गांधी के शांति पूर्ण क्रान्ति के कप्तान बने रहे ।

गांधी जी ने चम्पारण में ही पहले-पहल सत्याग्रह-रूपी अपने अस्त्र का सफल परीक्षण किया । उन्होंने लिखा कि चम्पारण में उन्हें परमात्मा, अहिंसा और सत्याग्रह की चरम शक्ति का ज्ञान हुआ । इसी सत्याग्रह में डॉ० राजेन्द्र प्रसाद को अहिंसा-धर्म की दीक्षा मिली, जिसका उन्होंने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में निर्वाह किया ।

पंडित मोतीलाल नेहरू और देशबन्धु चितरंजन दास ने स्वराज पार्टी बना ली थी, परन्तु राजेन्द्र बाबू लगातार गांधी जी के साथ रहे तथा असहयोग आन्दोलन का नेतृत्व करते रहे लेकिन स्वराज पार्टी की उन्होंने कभी भी अप्रिय आलोचना नहीं की । गांधी जी का शिविर यह मानता रहा कि स्वराज पार्टी कांग्रेस का संसदीय दल है । दोनों के बीच मतभेद मुख्यतः विधायिका सभा के बहिष्कार के प्रश्न पर था । स्वराज पार्टी चाहती थी कि विधायिका सभाओं से इस्तीफा देने के बजाय, उसी के मंच से ब्रिटिश शासन के विरुद्ध लड़ाई जारी रखी जाय । दोनों पक्षों द्वारा एक -दूसरे की प्रतिष्ठा किये जाने के फलस्वरूप दोनों पार्टियां फिर एक हो गयीं ।

1934 में डॉ० राजेन्द्र प्रसाद ने कांग्रेस का अध्यक्ष पद सरदार बल्लभ भाई पटेल से ग्रहण किया और 1936 में पं० जवाहर लाल नेहरू को समर्पित कर दिया इस बीच उन्होंने कांग्रेस में नरम और गरम दोनों गुटों के बीच सेतु का काम किया ।

गांधी जी और नेताजी सुभाष चन्द्र के बीच मतभेद के समय भी, डॉ० राजेन्द्र प्रसाद गांधी जी के साथ रहे ।

डॉ० राजेन्द्र प्रसाद अत्यंत सरल स्वभाव के थे । वे अपने विचारों के साथ कभी समझौता करने को तैयार नहीं होते थे । गांधी जी और सरदार पटेल के निधन के बाद पंडित जवाहर लाल नेहरू देश के सर्वोच्च नेता थे । फिर भी, नेहरू सरकार के हिन्दू कोड बिल पर उन्होंने हस्ताक्षर नहीं किया । उसे वापस कर दिया । इसके कारण किसी ने उन्हें पोंगापंथी करार दिया तो किसी ने प्रतिक्रियावादी कह दिया । फिर भी, वे अपने मत पर अडिग रहे ।

संविधान सभा के अध्यक्ष के रूप में उनकी भूमिका की सभी पक्षों ने सराहना की । संविधान सभा को उन्होंने किसी भी मुद्दे पर विभाजित होने नहीं दिया ।

अंतरिम सरकार में खाद्य एवं कृषि मंत्री के रूप में डॉ० राजेन्द्र प्रसाद की उपलब्धियों की विश्व-खाद्य संगठन ने सराहना की, परन्तु डॉ० राजेन्द्र प्रसाद ने उसके प्रमाण-पत्र की आड़ नहीं ली । उन्होंने अपने मंत्रालय को कहा कि अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों की रिपोर्ट पर हमें भ्रमित नहीं होना चाहिए । देश की आम जनता को खुराक जुटाने के लिए कृषि उत्पादन को दुगुना करने का प्रयास जारी रखना चाहिए ।

राष्ट्रपति पद से निवृत्त होने के बाद डॉ० राजेन्द्र प्रसाद ने पुनः पटना के सदाकत-आश्रम में वापस होने का फैसला किया । वहां लौटने पर उन्होंने कहा–''मैं अपने गांव लौट गया हूं । राष्ट्रपति भवन से मुक्त होने पर मुझे वही आनन्द हुआ, जो छात्र-जीवन में परीक्षा समाप्त होने के बाद होता था ।''

डॉ० राजेन्द्र प्रसाद का जीवन और आदर्श देशवासियों को सदैव प्रेरित करता रहेगा ।

बी/2 बी- 285 जनकपुरी
नई दिल्ली- 110 058

श्रम एवं श्रमिक कल्याण

मंजू पाठक

वर्ष 1991 की जनगणनानुसार उत्तर-प्रदेश की कुल जनसंख्या 13,87,60,417 है जबकि 1981 की जनगणनानुसार यह संख्या 11,08,62,013 थी। पिछले तरह इस दशक में जनसंख्या वृद्धि 25.16 प्रतिशत रही है। 1981 में जो जनसंख्या घनत्व 377 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर था वह 1991 में बढ़कर 471 व्यक्ति प्रतिवर्ग किलोमीटर हो गया। 82 प्रतिशत जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्रों में एवं 18 प्रतिशत जनसंख्या नगरीय क्षेत्रों में रहती है। 1981 में प्रदेश की कुल जनसंख्या में श्रमिकों का प्रतिशत 30.17 था। उत्तर प्रदेश में श्रमिकों का व्यावसायिक वर्गीकरण तालिका-1 से स्पष्ट है।

तालिका-1 : उत्तर प्रदेश में श्रमिकों का व्यावसायिक वर्गीकरण

श्रमिकों की श्रेणी	श्रमिकों की संख्या		योग
	नगरीय	ग्रामीण	
कृषक	4,69,876	1,84,87,896	1,89,57,772
कृषक श्रमिक	3,35,876	48,41,198	51,77,074
अन्य श्रमिक	45,64,497	36,97,411	82,61,908
योग	53,70,249	2,70,26,505	3,23,96 754

स्रोत-उ०प्र० वार्षिकी 1989-90

वर्ष 1987 से 1989 तक उत्तर-प्रदेश में सार्वजनिक क्षेत्र में नियोजित कर्मचारियों की संख्या तालिका-2 से स्पष्ट है।

तालिका- 2 : 1987 से 1989 तक उ०प्र० में सार्वजनिक क्षेत्र में नियोजित कर्मचारी

सार्वजनिक क्षेत्र	कर्मचारियों की संख्या		
	मार्च 1987,	मार्च 1988	मार्च 1989,
केन्द्रीय सरकार	4,70,850	4,63,597	4,61,795
राज्य सरकार	7,58,928	7,69,689	7,71,736
स्थानीय कर्मचारी	3,39,412	3,38,386	3,39,256
अर्ध सरकारी	5,29,496	5,37,765	5,35,935
योग	20,98,686	21,09,437	21,08,722

स्रोत-उत्तर प्रदेश वार्षिकी, 1989-90

उत्तर-प्रदेश में (सुरक्षा प्रतिष्ठानों को छोड़कर) 11,399 पंजीकृत कारखाने हैं जिसमें 902,080 श्रमिक नियोजित है।

बंधुआ मजदूर उन्मूलन

बंधुआ श्रम प्रथा की समाप्ति के उद्देश्य से भारत सरकार ने 24 अक्तूबर 1975 को अध्यादेश जारी किया था। उसके पश्चात् "बॉण्डेड लेबर सिस्टम एबालिशन, एक्ट, 1976" भारत सरकार के अध्यादेश के लागू होने की तिथि से लागू किया गया। इस अधिनियम की धारा 10 में प्रदेश के समस्त जिलाधिकारियों को इस अधिनियम के प्रावधानों का कार्यान्वयन सुनिश्चित करने के लिए अधिकृत किया गया है। पर्वतीय क्षेत्र के देहरादून, उत्तरकाशी एवं टिहरी गढ़वाल जनपदों में मार्च, 1990 तक कुल-18296 बंधुआ श्रमिकों का सत्यापन किया जा चुका है। मैदानी क्षेत्र के जनपदों के जिला अधिकारियों द्वारा कराए गये सर्वेक्षण के फलस्वरूप 8752 बंधुआ श्रमिकों का सत्यापन किया जा चुका है। इन सभी सत्यापित बंधुआ श्रमिकों को मुक्त भी कराया जा चुका है।

पर्वतीय क्षेत्र में पुनर्वास की कार्यवाही वर्ष 1976-77 से प्रारम्भ हो गई थी। 1 अप्रैल, 1986 से प्रत्येक अवमुक्त बंधुआ श्रमिकों को 6,250 रुपये मूल्य के दुधारू पशु, कृषि में प्रयोग आने वाले पशु एवं उपक्रम आदि उपलब्ध कराकर सहायता प्रदान की जाती है। इस व्यय का 50 प्रतिशत भारत सरकार द्वारा वहन किया जाता है। वर्ष 1988-89 तक विमुक्त बंधुआ श्रमिकों के पुनर्वास हेतु 1192.43 लाख (पर्वतीय क्षेत्र में 763.36 लाख) रुपये का व्यय किया जा चुका है।

मैदानी क्षेत्र में पुनर्वास का कार्य शासन द्वारा वर्ष 1979-80 में प्रथम बार आरंभ किया गया था। वर्ष 1989 में न्यूनतम मजदूरी सुनिश्चित करने के लिए कृषि निकायों में 98184 एवं अन्य नियोजनों में 64849 निरीक्षण किये गये, जबकि 1988 में कृषि निकायों में 112791 एवं अन्य निकायों में नियोजनों में 83046 निरीक्षण किये गये थे।

निरीक्षण के समय न्यूनतम वेतन से कम भुगतान किए जाने पर वर्ष 1989 में 6005 दावे दायर किये गये हैं । न्यूनतम मजदूरी सुनिश्चित कराना 20 सूत्रीय आर्थिक कार्यक्रम का योग है ।

दुर्घटनायें

वर्ष 1989 में प्रदेश के विभिन्न कारखानों में 7,020 दुर्घटनाओं की सूचना प्राप्त हुई हैं । वर्ष 1988 में दुर्घटनाओं की कुल संख्या 8,991 थी ।

श्रम कल्याण अधिनियम

इस अधिनियम के अन्तर्गत निधि में 31 दिसम्बर, 89 तक कुल धनराशि ब्याज सहित 24,24,039.65 रुपये है ।

आवास योजना

इस योजना के अन्तर्गत प्रदेश के विभिन्न 19 नगरों की 36 श्रमिक बस्तियों में 30,643 गृहों का निर्माण विविध संस्थानों द्वारा किया गया, जिनकी देख-रेख हेतु 63 निरीक्षक एवं सहायक गृह निरीक्षक के कार्यालय हैं । इस योजना के अन्तर्गत प्रशासन एवं व्यवस्था हेतु 659 कर्मचारी सेवारत हैं । वर्ष 1989 में 225 गृहों के आवंटन एवं बहाली की कार्यवाही की गई जिसके अनुसार 2,17,000,00 रुपये की राजस्व वसूली हुई । वर्तमान में प्रशासन द्वारा वर्ष 1990-91 हेतु, 2,77,000 नए पेंशनरों का लक्ष्य निर्धारित किया गया है । जिसमें 2,52,000 मैदानी एवं 25,000 पर्वतीय क्षेत्र के पेंशनर सम्मिलित हैं ।

बाल श्रमिकों के हितार्थ कार्यवाही

15 वर्ष की आयु के बच्चों को नियोजित न होने देने हेतु "भारत सरकार बाल श्रमिक निषेध एवं विनियमन अधिनियम, 1986" द्वारा दिनांक 23 दिसम्बर, 1986 को पारित किए गये अधिनियम के अन्तर्गत 15 वर्ष से कम आयु के बाल श्रमिकों का नियोजन अधिनियम की अनुसूची 1 व 2 में उल्लिखित नियोजनों में निषिद्ध किया गया है ।

अधिनियम के काम-2 के अनुसार "कारखाना अधिनियम 1948" एवं "मौटर परिवहन कर्मकार अधिनियम, 1961" के अन्तर्गत 15 वर्ष से कम आयु के बालकों का नियोजन भी निषिद्ध है । उल्लंघन किए जाने पर दण्ड की व्यवस्था "बाल अधिनियम, 1986" के अनुसार न्यूनतम 10,000 रुपये निर्धारित की गई है ।

श्रमिक कल्याण

इस वर्ष 104 बंधुआ मजदूरों को पुनर्वासित किए जाने के लक्ष्य के सापेक्ष्य मई, 1990 तक 95 बंधुआ मजदूरों को पुनर्वासित किया गया । 1 मार्च, 1990 तक 27,048 बंधुआ मजदूरों को सत्यापन कर अवमुक्त कराया गया एवं 26,825 को पुनर्वासित भी कराया जा चुका है ।

शोषण रोकने हेतु सूती वस्त्र उद्योग एवं इंजीनियरिंग उद्योग में ठेका प्रथा निषिद्ध कर दी गई है । प्रबंध में श्रमिकों की भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए भारत सरकार द्वारा एक विधेयक लाए जाने पर विचार किया जा रहा है । श्रमिक सहभागिता योजना 50 चीनी मिलों व राज्य की सार्वजनिक क्षेत्र की उत्पादन दर तथा सेवा में लगी इकाइयों में लागू की जा चुकी है ।

वादों को त्वरित गति से निपटाने हेतु इस वर्ष हल्द्वानी एवं रामपुर में श्रम न्यायालय एवं लखनऊ में एक अतिरिक्त औद्योगिक न्यायाधिकरण स्थापित किया जा चुका है । ग्रामीण असंगठित श्रमिकों की समस्याओं पर विवाद हेतु "राष्ट्रीय ग्रामीण श्रमिक आयोग" का गठन किया गया है । मजदूरों के बच्चों को उच्च प्राविधिक शिक्षा में प्रवेश पाने पर आर्थिक सहायता देने के लिए इस वर्ष 75 हजार रुपये की व्यवस्था की गई है । कर्मचारी राज्य बीमा योजना के सात अतिरिक्त अस्पताल इस वर्ष खोले जायेंगे । 13 अस्पताल पहले से ही कार्य कर रहे हैं ।

सभी औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थानों की पुरानी मशीनों को बदला जायेगा एवं 12 संस्थानों में नए व्यवसाय प्रारम्भ किये जायेंगे । इसके लिए 6 करोड़ रूपये की व्यवस्था की गई है । मजदूरों को शोषण से बचाने हेतु 15 नियोजनों में लगे मजदूरों की न्यूनतम दरें निर्धारित कर दी गई हैं एवं पाँच नियोजनों की दरें शीघ्र ही निर्धारित कर दी जायेंगी । इससे लगभग दो लाख से अधिक मजदूर लाभान्वित होंगे ।

ग्राम - नगवा
पो० - नगवा
जिला - बलिया (उ० प्र०)
पिनकोड - 277401

ग्रामीण अर्थव्यवस्था को नया रूप देने की आवश्यकता

शरदेन्दु

देश इस समय अर्थ संकट के एक गहन दौर से गुजर रहा है। इस बारे में कोई मतभेद नहीं, कोई दो राय नहीं। राज नेता, अर्थशास्त्री, सभी इस प्रश्न पर एकमत हैं।

जब हम गरीबी और बेरोजगारी समाप्त करने की बात करते हैं, जब हम विकास, प्रगति और सामाजिक न्याय को फिर से गति देने की बात करते हैं तो हमारी निगाह स्वतः अपने गांवों की ओर उठ जाती है। देश की जनसंख्या का सत्तर प्रतिशत आज भी गांवों में ही बसता है। यही नहीं, हमारे समग्र औद्योगिक विकास के बावजूद कृषि ही हमारी अर्थव्यवस्था की रीढ़ बनी हुई है और ग्रामीण अर्थव्यवस्था को नया रूप दिए बिना हम न गरीबी और बेरोजगारी को समाप्त करने की बात सोच सकते हैं और न विकास, प्रगति और सामाजिक न्याय को फिर से गति देने की बात सोच सकते हैं। कहने को तो स्वाधीनता-प्राप्ति के बाद के चालीस वर्षों में विकास और प्रगति के नाम पर बहुत-कुछ हुआ है किन्तु वह ऐसा नहीं है जिस पर हम संतोष या गर्व कर सकें। हमारे गांव आज भी अशिक्षा और अज्ञान के गढ़ बने हुए हैं। सामाजिक न्याय के नाम पर आज भी वहां सम्पन्न वर्ग पिछड़े वर्गों का शोषण कर रहे हैं। गरीबी की रेखा से नीचे जीवन-यापन करने वाले और बेरोजगार भूमिहीन कृषि मजदूरों का एक बहुत बड़ा प्रतिशत गांवों में ही बसता है। इतनी विशाल, मध्यम और लघु सिंचाई परियोजनाओं के बावजूद हम अभी तक तीस प्रतिशत से अधिक कृषि-भूमि को सिंचाई की सुविधाएं नहीं दे पाए हैं। विज्ञान और टेक्नोलोजी की पहुंच एक अत्यन्त सीमित वर्ग तक ही हो पाई है। महात्मा गांधी ने जिस ग्राम-स्वराज्य की कल्पना की थी और जो उनके जीवन का मूल आदर्श था, वह आधुनिक विकास की मृग-मरीचिका में कहीं लोप हो चुका है।

यह सब कहकर हम अब तक की प्रगति को नकारना नहीं चाहते। छठे दशक की बौनी संकर क्रान्ति, सातवें दशक के उत्तरार्ध और आठवें दशक के पूर्वार्ध की हरित् तथा श्वेत क्रान्तियां निश्चय ही हमारी प्रगति के कुछ उल्लेखनीय चरण हैं।

1971 में तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने 'गरीबी हटाओ' का नारा दिया था। बाद में 1975 में उन्होंने एक बीस-सूत्रीय कार्यक्रम की घोषणा की जिसमें समाज के पिछड़े वर्गों के कल्याण के लिए एक महत्वाकांक्षी कार्यक्रम अपनाने की बात थी। इस कार्यक्रम के प्रायः सभी सूत्रों का संबंध ग्रामों तथा ग्रामीण अर्थव्यवस्था के विकास से था। निम्न सूत्र उदाहरण के रूप में प्रस्तुत किए जा सकते हैं।

1. सिंचाई क्षमता में वृद्धि की जाए। सूखी जमीन पर खेती से संबंधित तकनीकी ज्ञान और खाद्यान्नों का विकास एवं प्रचार किया जाए।
2. दलहन और तिलहन के उत्पादन में वृद्धि के लिए विशेष प्रयास किए जाएं।
3. समग्र ग्रामीण विकास एवं राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम को सुदृढ़ एवं अधिक विस्तृत किया जाए।
4. कृषि योग्य भूमि की हदबंदी लागू हो। तमाम प्रशासनिक और कानूनी अड़चनों को दूर कर जमीन से संबंधित रिकार्डों को एकत्र कर पूरे तौर से ठीक किया जाए तथा हदबन्दी की सीमा से अधिक जमीन का बंटवारा भूमिहीनों के बीच किया जाए।
5. कृषि कार्य में लगे मजदूरों को न्यूनतम मजदूरी दिलाने से सम्बन्धित कानूनों की समीक्षा की जाए और इसे असरदार तरीके से लागू किया जाए।
6. बंधुआ मजदूरों के पुनर्वास की व्यवस्था की जाए।
7. अनुसूचित जातियों और जनजातियों के विकास से सम्बद्ध कार्य में तेजी लाई जाए।
8. दूर-दराज के इलाकों में बसे सभी ग्रामों में पीने के पानी का प्रबन्ध हो।
9. ग्रामीण क्षेत्रों के ऐसे परिवार जिनके पास अपने मकान बनाने के लिए जमीन नहीं है उनको इसके लिए जमीन दी जाए और उनके लिए मकान बनाने में सहायता से सम्बद्ध जो कार्यक्रम हैं उनका विस्तार किया जाए।
10. सभी गांवों में बिजली पहुंचाई जाए।

11. वनरोपण कार्यक्रम को पूरी-पूरी निष्ठा के साथ चलाया जाए ।
12. परिवार नियोजन को स्वैच्छिक आधार पर सार्वजनिक अभियान के रूप में चलाया जाए ।
13. सामान्य प्राथमिक स्वास्थ्य की सुविधाओं को ज्यादा बढ़ाया जाए तथा कुष्ठ, टी.बी. और अंधेपन को नियंत्रित करने के उपाय किए जाएं ।
14. गर्भवती महिलाओं, माताओं और बच्चों, विशेष रूप से आदिवासी, पहाड़ी एवं पिछड़े इलाकों में रहने वालों के लिए पौष्टिक आहार कार्यक्रम तीव्रगति से चलाए जाएं ।
15. छह से चौदह वर्ष तक के बच्चों के लिए प्रारम्भिक शिक्षा की व्यापक व्यवस्था की जाए और इस कार्यक्रम के अंतर्गत बालिकाओं को शिक्षित करने पर विशेष जोर दिया जाए ।
16. दूरदराज़ के इलाकों में चलती-फिरती दुकानों की व्यवस्था करके सार्वजनिक वितरण प्रणाली में बढ़ोतरी की जाए ।
17. दस्तकारी, हस्तकरघा एवं दूसरे ग्रामीण उद्योग-धन्धों को हर प्रकार की सुविधाएं दी जाएं, जिससे वे प्रगति करें और अपनी तकनीक को आधुनिक बना सकें ।

इंदिराजी ने इस कार्यक्रम को पूरा करने के लिए 'श्रमएव जयते' का नारा भी दिया । बाद में श्री राजीव गांधी ने अपने प्रधानमंत्री काल में इन बीस सूत्रों में नए आयाम जोड़े । इनमें जवाहर रोज़गार योजना विशेष उल्लेखनीय है । योजना-कार्य को मूल तक ले जाने के लिए पंचायती राज व्यवस्था को सुदृढ़ करने का भी प्रयास किया गया ।

इसके बावजूद हितग्राहियों को इन योजनाओं का अपेक्षित लाभ नहीं मिल सका । इसका सबसे ज्वलंत प्रमाण यह है कि 1991 के लोकसभा चुनावों में प्रायः सभी राष्ट्रीय राजनीतिक दलों ने कृषि और ग्रामीण क्षेत्रों के विकास के लिए अपने उन्हीं पुराने वायदों को पुनः दुहराया जो पिछले सभी आम चुनावों में करते आए हैं ।

वैसे इस स्थिति के लिए कुछ विशेष कारण भी हैं । सबसे अधिक दोष जनसंख्या-वृद्धि को दिया जाता है जो सतत् विकास की गति को पीछे छोड़ सी रही है । यह समस्या कितनी जटिल है इसका अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि विश्व में प्रति मिनट पैदा होने वाले 150 बच्चों में से 48 अर्थात् लगभग एक तिहाई भारत में जन्म लेते हैं । यदि यही स्थिति बनी रही तो आगामी सदी आते-आते हम चीन को पीछे छोड़कर जनसंख्या के मामले में विश्व का पहले नम्बर का देश हो जाएंगे । इसके फलस्वरूप प्रति वर्ष हमें पचास लाख नए रोज़गार पैदा करने होंगे और तीस लाख नए मकानों की आवश्यकता होगी । वर्तमान आर्थिक दशा को देखते हुए हमारे लिए यह प्रायः असम्भव कार्य है ।

लगभग इतना ही गंभीर एक अन्य कारण है । कुछ वर्ष पूर्व स्वर्गीय प्रधानमंत्री श्रीराजीव गांधी ने स्वीकार किया था कि विकास के लिए खर्च होने वाले प्रति छः रुपयों में हितग्राहियों को केवल एक रुपए का लाभ मिल पाता है । शेष पांच रुपये बिचौलियों की जेब में अथवा प्रशासनिक खर्च के खाते में चले जाते हैं ।

वनरोपण कार्यक्रम को पूरी-पूरी निष्ठा के साथ चलाने की बात कही गई । प्रति वर्ष समारोह पूर्वक वन-महोत्सवों का आयोजन किया गया । इसके बावजूद इतने बड़े पैमाने पर पेड़ काटे गए कि मैदान तो मैदान पहाड़ तक नंगे हो गए । इसका दंड हमें आज मौसम की अनियमितता के रूप में भुगतना पड़ रहा है ।

हमारी वर्तमान आर्थिक दुरावस्था के लिए सभी सरकारें कम उत्तरदायी नहीं हैं । सस्ती लोकप्रियता अर्जित करने के लिए सरकारें ऐसे अनेक कदम उठाती हैं जिससे हमारी अर्थव्यवस्था को भारी आघात पहुंचता है । इसी पृष्ठभूमि में हमें अपनी भावी-नीतियां और विकास का मार्ग निश्चित करना पड़ेगा ।

जब हम अर्थ-व्यवस्था को संकट से उबारने की बातें करते हैं तो हमें सबसे अधिक ध्यान ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था पर देना होगा । केवल औद्योगिक नीति में कुछ बुनियादी परिवर्तन करने से काम नहीं चलेगा, हमें अपने आयोजन की दिशा को भी बदलना होगा । हमारा अब तक का आयोजन मिला-जुला रहा है । हमें भी ईमानदारी से स्वीकार करना चाहिए कि हमारा आयोजन त्रुटिपूर्ण रहा है और इसका प्रमुख कारण आपसी तालमेल का अभाव ही रहा है । हमें अपना आयोजन जड़ों तक पहुंचाना है और उसके लिए अधिकांशतः अपने साधनों का ही उपयोग करना होगा । ग्राम-स्वराज की कल्पना तभी साकार होगी ।

हमें इस बात का पूरा प्रयत्न करना है कि विकास पर व्यय होने वाले हर छः रुपयों में से छः नहीं तो कम-से-कम चार रुपये अवश्य हितग्राहियों तक पहुंचें । प्रधानमंत्री ने इस बारे में भी कुछ आश्वासन दिए हैं और हमें देखना है कि वे किस प्रकार और कहां तक पूरे होते हैं ।

अंत में एक दृष्टि हम नई सरकार के प्रयासों पर डालना चाहेंगे । वित्तमंत्री मनमोहन सिंह एक कुशल अर्थशास्त्री हैं । पदभार संभालते ही उन्हें गंभीर आर्थिक चुनौतियों से जूझने को बाध्य होना पड़ा है । उसका सामना करने के लिए उन्होंने अनेक महत्वपूर्ण कदम उठाए हैं :

लाइसेंस प्रणाली में भारी छूट देकर उद्योग नीति को उदार बनाया गया है । प्रवासी भारतीयों को पूंजी निवेश के लिए अनेक सुविधाएं दी गई हैं बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के लिए भी देश के उद्योगों के द्वार खोल दिए गए हैं और कुछ उद्योगों में तो उनकी भागीदारी शत-प्रतिशत तक हो सकती है ।

इसमें संदेह नहीं कि देश को आज एक नई औद्योगिक तथा कृषि क्रान्ति की भारी आवश्यकता है, इसके बिना ग्रामीण अर्थव्यवस्था को, और समाज-व्यवस्था को भी, नया रूप दे पाना संभव नहीं है । देश का एक बड़ा भाग आज भी सामंती अर्थ-व्यवस्था और सामंती समाज-व्यवस्था में जी रहा है । साथ ही हमें यह भी नहीं भूलना चाहिए कि यदि जनसंख्या वृद्धि-दर पर तत्काल प्रभावी रोक नहीं लगाई गई तो कोई भी नई क्रान्ति पिछली क्रान्तियों की भांति निष्फल रह जाएगी । इसके लिए सरकार के दृढ़ संकल्प की अपेक्षा है और यह संकल्प शब्दों में नहीं, उपलब्धियों और आचरण में अभिव्यक्त होना चाहिए ।

ग्रामीण अर्थव्यवस्था के लिए जितना महत्व कृषि का है, उतना ही, वरन् उससे भी अधिक महत्व ग्राम, कुटीर, लघु तथा अति लघु उद्योगों का है । इन उद्यमों के विकास के बिना न तो ग्राम-स्वराज की कल्पना मूर्त रूप ले सकती है और न हम करोड़ों ग्रामीण बेरोजगारों तथा अर्ध-बेरोजगारों को उज्ज्वल भविष्य का आश्वासन दे सकते हैं । महात्मा गांधी ने कहा था, "ग्राम-स्वराज्य की मेरी कल्पना है कि वह एक पूर्ण गणतंत्र है, अपनी मूलाधार आवश्यकताओं के लिए अपने पड़ोसियों से स्वतंत्र और फिर भी अन्य अनेक आवश्यकताओं के लिए, जिनमें निर्भरता अनिवार्य है, परस्पर-निर्भर । ... हमें गांव को आत्म-निर्भर बनाने पर जोर देना है, जो प्रमुखतः उपयोग के माल तैयार करे । यदि ग्रामोद्योग के इस रूप को बनाए रखा गया तो ग्रामीणों द्वारा आधुनिक मशीनें तथा औजार, जो वे बना सकते हैं और उपयोग में लाने में सक्षम हैं, इस्तेमाल किए जाने पर आपत्ति नहीं होगी । ... मेरी आपत्ति मशीनों के बारे में नहीं, मशीनों की हवस के बारे में है । गांवों में घर-घर बिजली पहुंच सके तो मुझे इस पर कोई आपत्ति नहीं होगी कि ग्रामवासी अपने औजार और यंत्र से बिजली चलाएं ।"

"भारत की खोज" नामक अपनी पुस्तक में नेहरू जी ने लिखा है : "मशीनों के उपयोग के प्रति गांधीजी के दृष्टिकोण में धीरे-धीरे परिवर्तन आता दिखाई देता है । वह अनेक प्रकार के भारी उद्योगों और बड़े पैमाने के मूल उद्योगों तथा जनोपयोगी सेवाओं की आवश्यकता को स्वीकार करने लगे थे, बशर्ते कि वे राज्य के हाथ में रहें और उन कुटीर उद्योगों से, जिन्हें वे अनिवार्य समझते थे, छेड़छाड़ न करें ।"

प्रथम पंचवर्षीय योजना में अंतर्निहित सिद्धांतों, लक्ष्यों तथा विकास कार्यक्रम पर प्रकाश डालते हुए 15 दिसम्बर 1952 को नेहरूजी ने लोकसभा में कहा था : "देश का शीघ्र-से-शीघ्र औद्योगीकरण आवश्यक है और उद्योगों से मेरा आशय सभी प्रकार के उद्योगों से है—बड़े, मझोले और छोटे, ग्राम तथा कुटीर । ... भारी उद्योगों के बिना हमारा देश स्वाधीन नहीं रह सकता क्योंकि वे हमारी प्रतिरक्षा के लिए अनिवार्य है । लेकिन साथ ही हमें याद रखना चाहिए कि बड़े उद्योगों से इस देश के करोड़ों लोगों की बेरोजगारी की समस्या हल नहीं होगी । उसके लिए हमें ग्राम तथा कुटीर उद्योगों पर अधिकाधिक निर्भर रहना पड़ेगा और बड़े पैमाने पर उनको विकसित करना होगा ।"

विगत चालीस वर्षों से देश नेहरूजी द्वारा निर्दिष्ट इसी औद्योगिक नीति पर चल रहा है । इससे अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों का भारी विस्तार हुआ और विकासशील देशों में हमारी गणना सर्वप्रमुख औद्योगिक राष्ट्र के रूप में होने लगी । लेकिन जहां राष्ट्रीय समृद्धि में यह विस्तार आया, वहां गरीबी का क्षेत्र सिकुड़ा नहीं बल्कि व्यापक ही हुआ । बेरोजगारों की संख्या, विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में, तेजी से बढ़ी । फलस्वरूप ग्रामों तथा शहरों के बीच, वंचितों तथा सम्पन्नों के बीच असंतुलन भी बढ़ता गया । इस असंतुलन को दूर करने के लिए ही बीस-सूत्री कार्यक्रम, जवाहर रोजगार योजना जैसे कार्यक्रम अपनाए गए ।

असंतुलन आज भी कायम हैं । इसे स्वीकार करते हुए ग्रामीण अर्थव्यवस्था के विकास के लिए अनेक कदम उठाने का आश्वासन दिया । उनमें अधिक महत्वपूर्ण कुछ कदम निम्न हैं :-

1. कृषकों को प्रसार सुविधा एवं नई तकनीकी शिक्षा का पूरा लाभ दिलाया जाएगा ।
2. छोटे, मझोले एवं बड़े कृषि-आधारित कारखानों तथा खाद्य कारखानों की स्थापना कर आमदनी के स्रोत बढ़ाए जाएंगे ।
3. कृषि समवर्गी क्रियाओं जैसे पशुधन, मछलीपालन, उद्यान

कृषि, रेशम उत्पादन तथा दुग्ध उत्पादन जैसे व्यवसायों को कृषि विकास में उच्च प्राथमिकता दी जाएगी ।

4. स्पर्धाक्षम कुटीर, खाद्य तथा ग्रामीण उद्योगों को विशेष प्राथमिकता दी जाएगी क्योंकि वे गांव में रहने वाले लोगों की आमदनी का महत्वपूर्ण जरिया है ।
5. खाद्य पदार्थ प्रोसेसिंग तथा कृषि पदार्थ प्रोसेसिंग को बढ़ावा दिया जाएगा जिससे किसानों की आमदनी, गांवों में उनके रोजगार के अवसर, ग्रामीण अर्थव्यवस्था तथा गांवों में औद्योगीकरण को बल प्रदान किया जा सके ।
6. प्रतिवर्ष दस लाख सिंचाई कुंओं को बनाने में सहायता प्रदान की जाएगी ।

इनको पूरा करने का दायित्व अब नई सरकार का है । इसके लिए वह वचनबद्ध भी है । इस दिशा में उसने अनेक कदम उठाए भी हैं । सरकार के नए बजट-प्रस्तावों में और नई औद्योगिक नीति में कृषि तथा खाद्य आधारित उद्योगों के विकास के लिए अनेक सुविधाएं दी गई हैं । इसका लाभ निश्चित रूप से ग्रामीण क्षेत्रों को मिलेगा ।

इसी नीति का अनुगमन करते हुए सरकार ने छोटे तथा ग्रामीण उद्योगों के लिए एक समग्र योजना की घोषणा की है । इस नई नीति का सबसे मुख्य बिन्दु यह है कि मझोले तथा बड़े उद्योगों को लघु उद्योगों में चौबीस प्रतिशत तक पूंजी-निवेश की अनुमति दी गई है । इसके अतिरिक्त राष्ट्रीय ईक्विटी कोष के क्षेत्र को व्यापक बनाया जाएगा और 10 लाख रुपये तक के निवेश वाले उद्यमों को 15 प्रतिशत की सहायता दी जाएगी । 20 लाख रुपये तक की परियोजनाओं के लिए ऋण प्राप्त करने के लिऐ एक ही अधिकारी के पास जाना होगा । लघु उद्योग क्षेत्र को जटिल क्रियाविधियों और नौकरशाही जकड़ से मुक्त करने का भी वचन दिया गया है । उनके विकास के मार्ग की सभी बाधाएं दूर की जाएंगी । साथ ही कानूनों और नियम-विनियमनों को ऐसा रूप दिया जाएगा जिससे छोटे और ग्राम-उद्योगों के हितों को कोई आघात न पहुंचे ।

लघु उद्योग क्षेत्र की वास्तविक ऋण आवश्यकताएं पूरी होने में कोई अड़चन न आए, यह देखने के लिए एक विशेष मानीटरिंग एजेंसी स्थापित की जाएगी । ग्रामीण तथा पिछड़े क्षेत्रों को नई नीति का लाभ दिलाने के लिए और कृषि तथा उद्योग के बीच अधिक घनिष्ठ संबंधों के विकास के लिए राज्य सरकारों तथा वित्तीय संस्थाओं की भागीदारी से एक नई लघु उद्योग समग्र विकास योजना को क्रियान्वित किया जाएगा । आवश्यक प्रौद्योगिक जानकारी प्रदान करने के लिए एक प्रौद्योगिकी विकास कोष्ठ की स्थापना की जाएगी । सहकारी समितियों, सार्वजनिक क्षेत्र की संस्थाओं तथा अन्य व्यवसायी तथा विपणन संस्थाओं के माध्यम से लघु उद्योग क्षेत्र के माल के विपणन को बढ़ावा दिया जाएगा । इसके लिए राष्ट्रीय लघु उद्योग निगम विभिन्न इकाइयों द्वारा उत्पादित आम खपत के माल को एक ही नाम से बेचने पर बल देगा । एक निर्यात विकास केन्द्र की भी स्थापना की जाएगी ।

ग्रामोद्योग में हथकरघा उद्योग की अति विशिष्ट भूमिका है । कृषि के बाद हथकरघा उद्योग ही सबसे अधिक रोजगार प्रदान करता है । अतः हथकरघा विकास निगम के लिए भी एक व्यापक भूमिका की कल्पना की गई है । इसके अंतर्गत हथकरघा क्षेत्र की स्थानीय तथा क्षेत्रीय आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए एक नया रूप दिया जाएगा । करघों के आधुनिकीकरण, प्रशिक्षण, बेहतर डिजाइनों और बेहतर रंग-रसायनों की व्यवस्था के लिए पर्याप्त कोष की व्यवस्था की जाएगी ।

हस्तशिल्प क्षेत्र का उत्पादन बढ़ाने के लिए भी समग्र विकास प्रयास किए जाएंगे ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि सरकार ने कृषि तथा औद्योगिक विकास के लिए, उसके शब्दों में एक नई कृषि-क्रान्ति के लिए, एक अति महत्वाकांक्षी योजना अपनाई है । इस योजना की सफलता अनेक तथ्यों पर निर्भर है ।

प्रथम, वर्तमान सरकार को अपनी नीतियों पर पालन कराने के लिए पग-पग पर अन्य दलों की सहमति प्राप्त करना आवश्यक होगा ।

साधनों को जुटा पाना दूसरा बड़ा प्रश्न है । इसके लिए प्रवासी भारतीयों और बहुराष्ट्रीय कम्पनियों द्वारा निवेश पर अत्यधिक बल दिया गया है। अब बहुराष्ट्रीय कम्पनियों को उद्योगों में 51 प्रतिशत तक की और कुछ उद्योगों में 100 प्रतिशत तक भी पूंजी-निवेश की छूट मिल गई है ।

अंतिम और सबसे निर्णायक प्रश्न वही है—जनसंख्या-वृद्धि का । क्या सरकार उस पर अंकुश पाने में सफल होगी ? यह ऐसा प्रश्न है जो यदि कारगर ढंग से हल नहीं हुआ तो सभी अन्य प्रश्नों को पीछे छोड़ देगा ।

ए- 27, गुलमोहर पार्क,
नई दिल्ली- 49

जन-जन तक पहुंचेगा जल

कुलदीप शर्मा

हमारी धरती का दो तिहाई भाग पानी से घिरा हुआ है। इसमें 97.2 प्रतिशत पानी समुद्र में हिलोरे ले रहा है जो खारा है और पीने के लायक नहीं है। बाकी 2.8 प्रतिशत पानी स्वच्छ है, जिसमें 77 प्रतिशत हिमखंडों और ग्लेशियरों में जमा पड़ा है। 22 प्रतिशत धरती की गोद में विद्यमान हुआ है बाकी मात्र एक प्रतिशत पानी पृथ्वी की सतह पर झीलों, झरनों और वातावरण में समाया हुआ है। यही एक प्रतिशत पानी धरतीवासियों के लिए पेयजल के रूप में प्रयोग किया जा रहा है।

पीने के लिए स्वच्छ पानी की आवश्यकता को पूरा करने के लिए 1976 में यू०एन०ओ० कांफ्रेंस ऑन ह्यूमैन सेंटमेंट में मेजें थपथपा कर बड़े जोश में हुक्मनामा जारी हुआ था कि सभी देशों की सरकारों और अंतर्राष्ट्रीय एजेंसियों को साफ पानी के वितरण और व्यर्थ जल निपटाने के कार्यक्रमों को प्राथमिकता देनी चाहिए। इसी संदर्भ में मार्च 1977 में मारडेल प्लाटा (अर्जेंटीना) में आयोजित संयुक्त राष्ट्र संघ के एक सम्मेलन में एक स्वर से निर्णय लिया गया कि सारे विश्व में 1981 से 1990 तक की अवधि को "अंतर्राष्ट्रीय पेय जल दशक" के रूप में मनाया जाए।

विश्व बैंक की एक रपट के अनुसार विकासशील देशों में पानी की भारी किल्लत है। यहाँ आज भी व्यक्ति पानी की न्यूनतम आवश्यकता पूरी करने में सफल नहीं हो पाता। इस स्थिति को सुधारने के लिए सभी देशों में लम्बे समय से प्रयास किये जा रहे हैं। हमारे देश में पेयजल आपूर्ति के लिए नदियों और कुओं ने एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। मानव सभ्यता के विकास पर नजर दौड़ाइए, तो बात स्पष्ट होगी कि सभी प्राचीन सभ्यताएं किसी न किसी नदी के तट पर ही जन्मीं। ज्यों-ज्यों आबादी बढ़ती गई मानव रहने के लिए ठौर तलाशता हुआ दूर-दूर तक पहुँचने लगा। इस तरह से पानी के प्रमुख स्रोत नदियाँ दूर छूटती गईं और पनघट की यात्रा लम्बी होती गई। आज अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर यह बात तय हो चुकी है कि पानी की किल्लत ने महिलाओं के काम बढ़ा दिए हैं।

गांव-गांव में पानी

स्वतंत्रता के लगभग पाँच साल बाद ही देश में पेय जल की समस्या से निपटने के प्रयास प्रारंभ हो गये थे। इस कड़ी की पहली शुरूआत 1951 में बनी पहली पंचवर्षीय योजना से ही हो गयी थी। इसके लिए राज्य सरकारों के बजट में अतिरिक्त धनराशि उपलब्ध कराई गई। इसी के तहत राष्ट्रीय जल वितरण तथा स्वच्छता कार्यक्रम का श्रीगणेश 1954 में हुआ। इसके बाद राज्य स्तर पर अलग-अलग तरीके से संबंधित सरकारों ने प्रयास किये। कुछ राज्यों में काफी हद तक सफलता भी हाथ लगी, मगर अधिकांश स्थानों पर इस विकट समस्या पर काबू नहीं पाया जा सका। इसके लिए एकजुट हो राष्ट्रीय स्तर पर विचार विमर्श हुआ और इस बात की जरूरत महसूस की गई कि पहले उन गांवों को ढूंढा जाए जहां पानी की बेहद किल्लत है। ऐसे गांवों को समस्याग्रस्त गांव कहा गया। इसके लिए चौथी पंचवर्षीय योजना में केन्द्र सरकार ने राज्य सरकारों की सहायता की, ताकि कम समय में देश भर के समस्याग्रस्त गांवों की वस्तुस्थिति जानी जा सके।

वर्ष 1972-73 के दौरान केन्द्र सरकार की ही सहायता से राज्यों में "त्वरित ग्रामीण पेयजल वितरण कार्यक्रम" की रूपरेखा तैयार की गई और उसे तत्काल अमल में लाया गया। हालांकि इसे बीच में रोका भी गया, मगर 1978 में इसे पुनः और जोर-शोर के साथ शुरु किया गया। कार्यक्रम की सफलता परखने के लिए बीच-बीच में वस्तुस्थिति का जायजा भी लिया जाता रहा। अब जैसे छठी योजना की शुरुआत में जब देश में समस्याग्रस्त गांवों की स्थिति आंकी गई तो वह लगभग दो लाख 13 हजार थी। इतनी बड़ी संख्या को लेकर सरकारी तंत्र निश्चित ही चिन्तित था परन्तु इन पर काबू पाने के प्रयास भी जोरों पर थे। इन्हीं प्रयासों की सफलता हमारे सामने छठी योजना के अंत तक आई जब 1.92 लाख गांवों को पेय जल की कलकल सुना दी गई।

सातवीं पंचवर्षीय योजना की शुरुआत तक हम पेय जल दशक की यात्रा शुरु कर चुके थे। देश में बड़ी मुस्तैदी के

साथ पेय जल वितरण की दिशा में कदम उठाए जा रहे थे। अप्रैल 1985 में एक लाख 60 हजार समस्याग्रस्त गांव सामने आए जहां पानी पहुंचना बाकी था। इसी दौरान इस बात पर फिर से विचार किया गया कि आखिर हम समस्याग्रस्त गांव कहें किन्हें ? इसके लिए कुछ मोटी बातों को तय किया गया। मसलन जिन गांवों में पानी का स्रोत डेढ़ किलोमीटर की दूरी पर हो, जहाँ पानी से पैदा होने वाली बीमारियाँ भारी संख्या में पनपती हों, जहाँ खारापन आदि पानी से जुड़ी समस्याएं हों।

समस्याग्रस्त गांवों की पेय जल समस्याओं से मुस्तैदी से निपटने के लिए ही वर्ष 1986 में पेय जल तकनीकी मिशन की स्थापना की गई। इस मिशन का उद्देश्य गाँव-गाँव तक पेयजल पहुंचाना तो था ही साथ ही इसके अधीन पानी की गुणवत्ता जांचने के लिए प्रयोगशालाएं भी स्थापित करना था। इसी योजना के तहत 1990-91 तक 100 प्रयोगशालाएं स्थापित करने की योजना थी। इसमें 85 स्थायी और 15 चलती-फिरती प्रयोगशालाएं रखी गई थीं।

अब तक इसमें से चलती फिरती तो पूरी 15 प्रयोगशालाएं स्थापित कर दी गई हैं परन्तु स्थाई मात्र 69 ही स्थापित हो पाई हैं। 16 अभी शेष हैं, जिन्हें आठवीं पंचवर्षीय योजना में पूर्ण कर दिया जाएगा। इस योजना के अंतर्गत यह बात तय की गई है कि भविष्य में प्रत्येक जिले में कम से कम एक जल जाँच प्रयोगशाला स्थापित की जाए।

पेय जल तकनीकी मिशन से ही जुड़े 55 "मिनी मिशन" देश के विभिन्न जिलों में स्थापित किए गए हैं। इनके अन्तर्गत खारेपन पर काबू पाना, अतिरिक्त लौह और फ्लोरोसिस की गंभीर समस्या को समूल नष्ट करना, गिनीवर्म पर काबू पाना आदि लक्ष्य रखे गए हैं।

इसके अलावा उपग्रह तथा अन्य साधनों की मदद से भू-जल स्रोतों का पता लगाना भी इस मिशन का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य है। इसमें केन्द्रीय भू-जल बोर्ड ने विशेष भूमिका निभाई है। साथ ही वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद् की प्रयोगशालाओं ने भी विशिष्ट सहयोग दिया है। यही नहीं इस दिशा में राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्वयंसेवी संगठनों ने भी सहयोग दिया।

एक लम्बे समय तक देश के अधिकांश गांवों की स्थिति यह रही कि लोग कुंए, बावड़ी और पानी के अन्य प्राकृतिक स्रोतों को अधिक महत्व देते रहे। हत्थे के नल लग जाने बाद भी 40 प्रतिशत लोग अन्य साधनों को ही अपनाते रहे। इंडिया मार्क-2 हत्थे के नल में सुधार हुआ और इंडिया मार्क-3 नल सामने आया है, जिसकी कार्य अवधि औसतन दस वर्ष आंकी गई है।

गंदलाता पानी, जागरूकता आपकी

यह एक माना हुआ तथ्य है कि विश्व भर में औद्योगिक विकास के साथ ही जल प्रदूषण की समस्या गहराई है। अब चाहे विकसित देश हो, या विकासशील देश, दोनों ही जगह इस समस्या ने साफ पानी के सपने पर पानी फेरा है। हमारे देश में जल-प्रदूषण के पीछे औद्योगिकीकरण का इतना हाथ नहीं है जितना कि बढ़ती जनसंख्या का, जिसके कारण मल विसर्जन अन्य देशों की अपेक्षा अधिक है। यदि 68 करोड़ जनसंख्या को मानक मान लिया जाए तो देश में हर रोज लगभग 80 लाख घन मी० मल इकट्ठा हो जाता है इसकी आधी मात्रा भी उपचारित नहीं हो पाती है। स्थिति यह कि देश के 142 बड़े शहरों में से मात्र 8 शहरों में मलवाहक व मल उपचार व्यवस्था है, 62 में यह आंशिक रूप से, 72 में बिल्कुल ही नहीं है।

दूसरी ओर औद्योगिकीकरण की चोट देखिए। देश में विभिन्न उद्योगों में साफ पानी की खपत लगभग 600 करोड़ घन मी० है। एक अनुमान के अनुसार इस सदी की समाप्ति तक इसकी मात्रा लगभग पाँच गुना और उसके 25-30 साल बाद पच्चीस गुना बढ़ जाएगी। अब यह बात स्पष्ट है कि लगभग इसी अनुपात में औद्योगिक कचरा भी निकलेगा, जो जल को मटियामेट करेगा। आज भी स्थिति यह है कि कलकत्ता, बम्बई, मद्रास, दिल्ली और कानपुर जैसे शहरों में स्थापित उद्योग कचरा छोड़ पानी बर्बाद कर रहे हैं।

हमारे देश में मल विसर्जन और औद्योगिक कचरे की बोझ बेचारी नदियां ढोती हैं, राष्ट्रीय पर्यावरण इंजीनियरिंग अनुसंधान संस्थान (नीरी) की एक रपट के अनुसार देश की नदियों का 70 प्रतिशत पानी दूषित है। इसी प्रकार केन्द्रीय जल प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड की रपट बताती है कि कानपुर व इलाहाबाद के बाद "गंगा मैया" में कीटाणु प्रदूषण कई गुना अधिक बढ़ जाता है। गोमुख से लेकर सागर द्वीप तक गंगा के पूरे प्रवाह क्षेत्र में लाखों लोग स्नान कर अपने शरीर की गंदगी गंगा को सौंपते हैं। इसके अलावा गंगा के मैदानी भागों में प्रति वर्ग कि०मी० क्षेत्र में लगभग 271 व्यक्ति रहते हैं, जबकि राष्ट्रीय औसत 196 व्यक्तियों का है। गंगा के प्रवाह क्षेत्र में पड़ने वाले आठ

राज्यों में गंगा के समीप 692 कस्बे और शहर बसे हैं जो सारी गंदगी गंगा में डुबोते हैं ।

गंदलाते पानी की समस्याएं विकट हैं । 1974 में इस देश के पानी को प्रदूषण से बचाने के लिए एक अधिनियम बनाया गया था । इसके अलावा क्षेत्रीय बोर्डों का भी गठन किया गया था, जिनका काम क्षेत्र विशेष में प्रदूषण को रोकना और यह गौर करना था कि कानून का पालन कड़ाई से हो रहा है या नहीं । बोर्ड ने मुस्तैदी से काम भी किया और कुछ दोषी लोगों को दंडित भी किया ।

पानी जिन प्राकृतिक स्रोतों से प्राप्त किया जाता है उसमें आमतौर पर दो प्रकार की अस्वच्छता या संक्रमण रहता है । एक तो जैविक जो कि मानव समेत अन्य जीवधारी और कीटाणुओं की बदौलत है । दूसरा मानव की आदतों, जिनमें मल कचरा आदि फेंका जाना मुख्य है । यहाँ तक कि जो पानी काफी मेहनत मशक्कत के बाद हासिल किया जाता है उसमें भी संग्रह के दौरान कहीं न कहीं संक्रमण आ ही जाता है । इसके अलावा ग्रामीण क्षेत्रों में ऊर्वरक और कीटनाशकों के प्रयोग भी पानी को संक्रमित कर डालते हैं ।

वर्ष 1987-88 के दौरान लखनऊ स्थित विषक्तता अनुसंधान केन्द्र द्वारा किये गये एक अध्ययन में पाया गया है कि भूमिगत जल भी सीधे पीने योग्य नहीं है । उसमें भी कीटाणुओं की भारी संख्या है । उत्तर प्रदेश में विभिन्न स्थानों से लिए गये 1088 नमूनों में, 10 से 100 प्रतिशत संक्रमण पाया गया । स्वच्छ पानी के रास्ते में आने वाली रुकावटों का राष्ट्रीय पेय जल तकनीकी मिशन ने बड़े पैमाने पर अध्ययन किया है और पाया है कि खारापन, अधिक लौह तत्व, गिनी वर्म, कीड़े आदि पानी को चौपट करते हैं । संक्रमित पानी का सीधा असर आपके बेशकीमती स्वास्थ्य पर पड़ता है । विश्व स्वास्थ्य संगठन की रपट के अनुसार विकासशील देशों में 80 प्रतिशत रोग पानी के संक्रमण के कारण ही पैदा होते हैं । हाल ही में जारी की गई एक रिपोर्ट के अनुसार देश में हर मिनट एक बच्चे की जान संक्रमित पानी हलक के नीचे उतारने भर से चली जाती है । पानी से उत्पन्न रोगों में डायरिया, पेचिश, हैजा, टाइफाइड, मलेरिया, कीड़े आदि आज बच्चों के लिए तो मौत के वाहक बन गए हैं । गहराई से देखिए तो पानी से जुड़े रोग पाँच तरीके से आते हैं । पहले हैं सीधे पानी से होने वाले रोग जैसे हैजा, गेस्ट्रोएंट्राइसिस, डायरिया वर्गीय रोग, पेचिश, टाइफाटड वगैरह । दूसरे वे रोग हैं जो संक्रमित जल से त्वचा धोने भर से हो जाते हैं जैसे आँखों को चपेटते रोग, रोहे आना (कंजुक्टिवाइटिस) एलर्जी आदि । तीसरे पानी से स्थानान्तरित होने वाले रोग जैसे मलेरिया, फाइलेरिया, डेंगू, गिनीवर्म आदि । चौथे पानी की कमी से फैली अस्वच्छता के कारण होने वाले रोग जैसे टिटनस, हेलिमन्थस आदि और पांचवें हैं पानी में किसी तत्व की अधिकता हो जाने से फैलने वाले रोग जैसे फ्लोरीन से फ्लोरीकरण जैसे रोग जो दांतों और हड्डियों तक पर चोट करता है । इनमें डायरिया वर्ग के रोग काफी भीषण हैं और आज भी लाखों-करोड़ों की जान के लिए खतरा बने हुए हैं । गावों और छोटे शहरों की बात तो छोड़िये दिल्ली जैसे महानगर और देश की राजधानी में ही 1988 में पानी से फैलने वाले रोगों ने कहर ढाया । इस दौरान शहर के अस्पतालों से मिली रिपोर्ट के आधार पर भीषण डायरिया और उल्टियों की 15,000 घटनाएं सामने आयीं । इनमें से 600 की तो पूरी तरह से हैजा रोग के रूप में पुष्टि हुई । एक महीने में 200 से भी ऊपर मौतें हुईं, जिनके पीछे पानी का संक्रमण था ।

देश भर में डायरिया को लेकर हुए अध्ययन बताते हैं कि पांच साल से कम उम्र के अधिकांश बच्चे डायरिया से पीड़ित होते हैं । इनमें 10 प्रतिशत में पानी की कमी के कारण शरीर ऐंठता है । इनमें एक बड़ा वर्ग सही जानकारी न होने से अस्पताल तक न पहुंच पाने और पहुंच कर भी सही इलाज न मिल पाने के कारण काल के गाल में जा समाता है । इसी प्रकार गिनी वर्म की समस्या है जो देश में लगभग सभी स्थानों पर है, परन्तु आन्ध्र प्रदेश, गुजरात, कर्नाटक, मध्य प्रदेश और राजस्थान में भी सिर उठाये हुए है ।

इस देश में फ्लोराइड को लेकर बड़ी चर्चा रही है । इस बारे में वैज्ञानिक कहते हैं कि फ्लोराइड के कारण दांत ही नहीं शरीर भी चौपट हो जाता है ।

इस गंदलाते और रोगों को समाए पानी के खतरों से निपटने के लिए भगीरथ प्रयास करने होंगे । हालांकि, इस दिशा में केन्द्र और राज्य सरकारें कंधे से कंधा मिलाकर जुटी हुई हैं । साथ ही गैर सरकारी संगठन भी अपनी सेवाएं दे रहे हैं, मगर अभी बहुत कुछ करना बाकी है । सरकार द्वारा जल शोधन के छोटे-बड़े संयंत्र लगाए गए हैं । साथ ही विदेशों का सहयोग है । दिल्ली में जल-मल प्रदाय संस्थान द्वारा गोकुलपुरी में एक बड़े क्षेत्र में जल शोधन संयंत्र लगाया गया है, जहाँ शहर की गंदगी मिले पानी को पीने योग्य बनाया जाता है ।

जल संग्रह की कला में भारत को एक लंबे समय से महारत हासिल है । सदियों से भारत में ऐसी तकनीकें विकसित होती रही हैं जो वैज्ञानिक भंडारण के उत्कृष्ट नमूने हैं । पुरातत्व

विभाग के भूतपूर्व महानिदेशक श्री बी०वी० लाल ने 27,000 से भी ज्यादा पुराने हौज यानि "वाटर टैंक्स" की एक शृंखला इलाहाबाद के नजदीक खोजी है। इन टैंकों में पानी नदी से आता है। टैंकों की शृंखला के पीछे आज की जल शोधन की अत्याधुनिक तकनीक सामने आयी है, जिसमें पानी एक के बाद एक टैंक से गुजरता है और टैंक में अशुद्धि छोड़ जाता है। इस तरह से अंतिम टैंक में पानी साफ और लवण रहित हो जाता है।

यह अपने आप में एक आश्चर्यपूर्ण तथ्य है कि जब राजस्थान में जोधपुर, बीकानेर, जैसलमेर आदि स्थानो पर आज जैसी पाइप व्यवस्था नहीं थी, तब वहाँ के रजवाड़े भला पानी की कमी को कैसे पूरी करते थे? पुरातत्व विभाग के सर्वेक्षणों से ऐसे तथ्य सामने आए हैं जो बताते हैं कि उस समय जल संग्रह की अत्यन्त सुधरी और सुदृढ़ तकनीक उपलब्ध थी। जोधपुर शहर में जल वितरण, शोधन और संग्रह की संरचनाएं और उनसे जुड़ी तकनीकें सामने आयी हैं। इनमें रानीसौर में सन् 1500 का एक हौज मिला है जो जोधपुर के किले के आंतरिक प्रांगण में निर्मित है। मजे की बात तो यह है कि किला काफी ऊंचाई पर है। इससे पहाड़ों से गुजरती कई ढकी हुई नालियाँ आकर मिलती हैं, जो कभी इस हौज में प्रकृति से साफ पानी लाकर भरा करती थीं। इन नालियों की संरचना इस प्रकार की है कि पानी की गंदगी कई पड़ावों पर छनती जाती है और अंत में हौज में साफ पानी जा पहुंचता है। जब हौज पूरी तरह से भर जाता है तो अतिरिक्त पानी पास के जुड़े हौज में जा पहुंचता है। इसके अलावा जोधपुर में प्राचीन कुंए और नहरें भी हैं। इस शताब्दि की शुरुआत में अकेले जोधपुर मे पानी के लगभग 200 स्रोत उपलब्ध थे, जिनमें 50 हौज, 50 सीढ़ीदार कुएं और 70 सामान्य कुएं थे। इसके अलावा छोटी बावड़ियां भी थीं, जो बीते कल की सुघड़ जल व्यवस्था की कहानी कहती थी।

राजस्थान और गुजरात में घर में जल संग्रह की पुरानी तकनीकें भी काफी वैज्ञानिक आधार लिए हुए हैं। यहाँ लोग एक लंबे समय से घर की छतों से घर के अंदर वर्षा का पानी इकट्ठा करते रहे हैं! इसमें प्रयुक्त युक्ति को टाँका कहते हैं। ये टाँके भूमिगत होते थे। आज भी बहुत से घरों में यह युक्ति उपलब्ध है, मगर अधिकांश या तो खंडहर हो चुकी हैं या लुप्त। कभी जोधपुर में पानी का एक प्रमुख स्रोत हुआ करता था- "बाईजी का तालाब" जो शहर के एक बड़े हिस्से की पानी की आवश्यकता पूरी करता था। इसी प्रकार चुरु में कुण्ड या कुण्डी भी जल-भरण के अनोखे स्रोत रहे हैं।

लद्दाख में भी कई ऐसी जल भरण संरचनाएं पाई गईं, जो 12,000 फीट की ऊँचाई पर भी पानी पहुँचाने की अनोखी तकनीक दर्शाती है।

एक लम्बे समय से हमारे देश में जल शोधन की प्रचलित विधि रही है "तीन घड़ा पद्धति"। इसमें एक घड़े में कोयला, दूसरे में बालू रहती है, जो पानी की अशुद्धियों को दूर कर अंत में शुद्ध पानी पहुंचाती है। यह विधि हमारे देश ही की देन है। इसे लम्बे समय तक प्रयुक्त किया जाता रहा है। स्थिति यह है कि आज की कई तकनीकें इसी पर आधारित हैं। उदाहरण के तौर पर केन्द्रीय कांच और सिरेमिक अनुसंधान संस्थान, कलकत्ता द्वारा विकसित दूषित पेयजल शोधन तकनीक को ही लीजिये। इसमें दो घड़े प्रयुक्त किये गये हैं, जिनमें ऊपर के घड़े में टोटी लगी होती हैं जो जल को शुद्ध करती है।

घरों में शुद्ध पानी पीने की गरज से "वाटर फिल्टर" और "वाटर प्यूरीफायर" जैसी युक्तियाँ उपलब्ध हैं। इस दिशा में संरचना इंजीनियरी अनुसंधान संस्थान द्वारा फेरोसीमेंट की पानी भंडारण तकनीक विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

बड़े पैमाने पर जल शोधन के लिए बड़े-बड़े शोधन संयंत्र लगाए जाते हैं। इनमें छन्नकों और रसायनों की मदद से पानी को शुद्ध किया जाता है।

आज सरकारी और गैर सरकारी प्रयासों की बदौलत देश के एक बड़े भाग में पेयजल की समस्या को हल किया जा चुका है। मगर इस यात्रा के अभी और पड़ाव बाकी है। पानी की कल-कल सुनने के लिए जो लोग प्रतीक्षारत हैं, आपको उनकी स्थिति को सोच पानी की बरबादी रोकनी है। इस दिशा में हमारी आपकी जागरूकता बहुत महत्व रखती है। ध्यान रखिये पानी की बरबाद होती हर बूँद किसी प्यासे के काम आ सकती है।

संपादक
"खेती" फल-फूल एवं
"कृषि चयनिका"
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्
602, कृषि अनुसंधान भवन
पूसा गेट, नई दिल्ली- 12

भूमि सुधार कार्यक्रमों में पंचायत की भूमिका

डॉ० घनश्याम सिंह चौहान
डॉ० राजेन्द्र प्रसाद

भारत के ग्रामीण परिवेश में रहने वाला व्यक्ति मुख्यतः गरीबी से ग्रस्त है । अन्य कठिनाइयां भी इस महामारी के कारण दिन-प्रतिदिन उभरती ही रहती हैं । कृषि विकास और सर्वाधिक लोगों को गरीबी रेखा से ऊपर उठाने को आज के समय में पर्याप्त समझा जा रहा है । गरीबी हटाने का सर्वोत्तम उपाय है अधिक कृषि उत्पादन और उत्पादन दर की क्षमता में वृद्धि । यह तभी संभव है जबकि बहुआयामी कार्यक्रम अपनाकर अधिक से अधिक भूमि में खेती की जा सके ।

जैसा कि सर्वविदित है, कृषि का उन्नत होना तकनीकी और संस्थानात्मक--दो प्रकार के तत्वों पर निर्भर करता है । तकनीकी तत्वों से अभिप्राय उत्तम बीजों, रासायनिक खादों, कीटाणुनाशक औषधियों, उन्नत कृषि औजारों, सिंचाई की उपयुक्त सुविधाओं, खेती करने की विधियों, सुचारु प्रसार योजनाओं आदि से है । इन सब से कृषि उत्पादन यथा-संभव बढ़ाया जा सकता है । संस्थानात्मक तत्वों से तात्पर्य कृषि उत्पादन के सामाजिक पहलुओं से है । इनमें सुधार किए बिना कृषि की उन्नति, विभिन्न कार्यक्रमों में सामाजिक भागीदारी एवं सामाजिक न्याय संभव नहीं है । संस्थानात्मक सुधारों से ग्राम पंचायतों एवं भूमि सुधार का सीधा सम्पर्क है ।

ग्राम पंचायत विकास का बुनियादी आधार

दूसरी पंचवर्षीय योजना से अब तक लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण को प्रायोगिक रूप देने की भरसक कोशिश की जाती रही है । इसके अनन्तर पंचायतों को संगठन और वित्तीय दृष्टि से मजबूत बनाने के साथ-साथ उनके चुनाव नियमित रूप से कराने पर बल दिया गया है । पंचायतों को विकास कार्यक्रमों को क्रियान्वित करने का दायित्व सौंपने का भी निश्चय किया गया है । वैसे भी ग्राम पंचायत, ग्रामीण विकास एवं मानव संसाधन विकास का बुनियादी आधार है ।

लवणयुक्त क्षेत्रों की बढ़ोत्तरी

जनसंख्या की असीम वृद्धि के कारण प्राकृतिक संसाधनों पर दबाव बढ़ता ही जा रहा है । वन काटने से पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है । भूमि-संसाधन पर अतिरिक्त भार बढ़ता ही जा रहा है जो कि असहनीय स्थिति में पहुंचने वाला है । यदि समय रहते इस दिशा में कारगर कदम नहीं उठाए गए तो इस पृथ्वी पर जीवन कठिन ही नहीं वरन् असंभव हो जाएगा ।

अनुमानित आंकड़ों के अनुसार लाखों हैक्टेयर जमीन बंजर भूमि में बदल रही है । भारत में लगभग 1750 लाख हैक्टेयर भूमि भिन्न-भिन्न समस्याओं से प्रभावित है जिस में 70 लाख हैक्टेयर भूमि लवण और क्षार से ग्रस्त है । इसमें से लगभग 40 प्रतिशत भाग देश के सर्वाधिक उपजाऊ गंगा एवं तटीय क्षेत्रों में स्थित है । जनसंख्या वृद्धि एवं गिरती हुई कृषि उत्पादन क्षमता के कारण, वनों एवं चरागाहों पर निर्भरता की स्थिति निरन्तर खराब होती जा रही है क्योंकि जैसे-जैसे कृषि उत्पादकता घटती है, भूमि की बढ़ती हुई आबादी को सहन एवं संरक्षण देने की क्षमता भी घट जाती है, अतः वनों पर ज्यादा दबाव बढ़ जाता है । प्राकृतिक संसाधनों का संतुलित उपयोग ही इस समस्या का एकमात्र समाधान है, क्योंकि इस प्रकार के विकास से भावी समाज भी लाभप्रद हो सकेगा ।

इस दिशा में लवणग्रस्त सामुदायिक भूमियों का सुधार एवं विकास एक निर्णायक कदम सिद्ध हो सकता है । भारत सरकार इस उद्देश्य को मद्दे नजर रखते हुए कई कारगर कदम उठा रही है ताकि स्थानीय स्तर के संसाधनों का उचित उपयोग एवं सवंर्धन हो सके । अधिकांश ऊसर भूमि छोटे एवं सीमान्त किसानों के पास है । इस भूमि का अधिकार उन्हें सरप्लस अथवा सामुदायिक भूमि में से आबंटित किया गया है ।

यहां पर वस्तुस्थिति में सामुदायिक भूमि का समुचित उपयोग, इस उपयोग के लिये सुझाव एवं इस सम्बन्ध में आने वाली रुकावटों को समझने का प्रयत्न किया गया है ।

सामुदायिक भूमि पर वर्तमान समय में फसलों आदि का वृद्धि प्रतिरूप

एक अध्ययन से पता चला है कि हरियाणा राज्य में पंचायतों के पास बहुत सी शामलात देह बंजर पड़ी हुई है । हरियाणा

के केवल करनाल जिले में ही कुल 32,972 हैक्टेयर सामुदायिक भूमि है जिसमें से 25.3 प्रतिशत लवण-ग्रस्त है । इसी जिले के 12 खंडों में से 4 खंडों को अध्ययन के लिए चुना गया और कुल 78 गांवों के आंकड़े इकट्ठे किये गए ।

ग्राम सरपंचों का रुझान देखने के लिए उनका भी साक्षात्कार लिया गया । करनाल जिले में अध्ययन से पता चला कि 35 से 63 प्रतिशत तक सामुदायिक भूमि लवण ग्रस्त एवं बंजर भूमि है । इस भूमि का अधिकतर भाग तो चरागाह के लिये प्रयुक्त किया जाता है । इसके विपरीत ठीक भूमि में से कुछ हिस्सा खेतिहर मजदूरों को फसल उत्पादन के लिए आबंटित किया गया है परन्तु वानिकी आदि के लिए अत्यन्त कम भूमि रखी गई है जो कि सर्वथा अनुपयुक्त है । इससे यह साफ जाहिर है कि सामुदायिक भूमि का संतुलित उपयोग नहीं हो रहा है । पिछले कुछ वर्षों से अनुसंधानों के आधार पर केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान, करनाल के वैज्ञानिकों ने लवण सामुदायिक भूमियों के भूमि सुधार तथा फसल/वृक्ष उगाने की कार्य प्रणाली निकाली है । तथापि बंजर/ऊसर भूमि में उपयुक्त पौधे जैसे बेर, बबूल, कीकर तथा घास जो धीरे-धीरे भूमि सुधार का काम भी करते हैं, उगाने के प्रयास किए जा सकते हैं ।

अवरोधक एवं उपाय

सामुदायिक भूमि के उचित एवं संतुलित उपयोग में अनेक प्रकार की क्षमताएं विद्यमान हैं । यदि समय पर इस तरफ ध्यान दिया जाए तो हमें अपने लक्ष्य प्राप्त करने में कोई कठिनाई नहीं होगी । कुछ प्रमुख तत्व जो इस प्रक्रिया में अहम् भूमिका निभा सकते हैं, इस प्रकार हैं :-

1. ग्राम पंच-सरपंचों की भूमिका

ग्राम विकास के कार्यों में सरपंच एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है । पंचायत एक स्थानीय संस्था होने के नाते ग्राम-समाज के अनेक पहलुओं पर अनुकूल दबाव डालकर समय-समय पर सामुदायिक भूमि सुधार प्रणाली को बल प्रदान करती है । समय की पुकार है कि ग्राम पंच, सरपंचों के रुझान एवं मनोवृत्ति को सकारात्मक बनाया जाए ताकि वे रचनात्मक कार्यों को आगे बढ़ाने में सहयोग दे सकें । इस अध्ययन के दौरान यह भी पाया गया कि 50 प्रतिशत सरपंचों का रुझान सामुदायिक भूमि के संतुलित उपयोग के बारे में सकारात्मक था । लगभग 41 प्रतिशत सरपंचों का रुझान नकारात्मक था । ऐसा मुख्यतः तकनीकी, वित्तीय संगठनात्मक, राजनैतिक एवं सामाजिक कारणों से था । इसलिए यह आवश्यक है कि नई तकनीकियों एवं सूचनाओं का ग्राम सभा में शीघ्रातिशीघ्र पहुंचाने का कार्य निरन्तर चलता रहना चाहिए । इसके लिए स्थानीय शासन, प्रसार विभाग एवं ग्राम पंचायतों का सहयोग नितान्त आवश्यक है । इस सहयोग की प्रवृत्ति को भी विभिन्न उपायों द्वारा बढ़ावा दिया जाना चाहिए ।

2. सामाजिक भागीदारी

किसी भी राष्ट्रीय कार्यक्रम की सफलता सामाजिक भागीदारी पर निर्भर करती है । खासतौर पर जब कि सामुदायिक साधनों के सदुपयोग की बात हो । इस भागीदारी की प्रवृत्ति को बढ़ाने के लिये समय-समय पर अनेकों उपाय किए गए हैं परन्तु उनमें मनोवांछित सफलता नहीं मिल सकी । इसके लिए भी यदि निचले स्तर से ही प्रयत्न किए जाएं जिनमें ग्राम पंचायत विभिन्न कारकों का समायोजन करके ग्राम के हर नागरिक की मनोवृत्ति को बदल सके तो निश्चित रूप से सफलता मिलेगी ।

3. कानूनी सुधार

देश के कई राज्यों में पंचायत की भूमि के बारे में एक कानून बनाया गया है कि पंचायत की शामलात देह को अधिक समय के लिए पट्टे पर नहीं दिया जा सकता क्योंकि इस कम अवधि के पट्टे के कारण भूमि-सुधार के कार्य में कोई भी व्यक्ति रुचि नहीं लेता । इसी प्रकार इस जमीन के बारे में पट्टेदार कोई महत्वपूर्ण फैसला भी नहीं ले पाता । फलस्वरूप यह जमीन वैसी ही अवस्था में निरन्तर पड़ी रहती है । यह अवधि कम से कम सात वर्ष कर देनी चाहिए, विशेषकर ज यह भूमि क्षार-ग्रस्त हो ।

4. संगठनात्मक एवं शैक्षिणक कारण

विकास कार्यों की दर तेज करने के लिये ही पंचायतों का पुर्ननिर्माण किया गया था । ग्राम पंचायत के सरपंच एवं सचिव को समय-समय पर थोड़ी अवधि के प्रशिक्षण देने चाहिये ताकि वे इस कार्य को अबाध गति से आगे बढ़ा सकें और कृषि उत्पादन को बढ़ाने में सहयोग दे सकें ।

5. स्वयंसेवी संस्थाएं

अब तक के पहलुओं से सरकारी तन्त्र इस नतीजे पर पहुंचा है कि ग्रामीण विकास में ऊसर/बंजर भूमि का सुधार एक निर्णायक कदम हो सकता है और इस विकास की कड़ी के दायित्व को पूरा करने के लिये सिर्फ सरकारी प्रयास पर्याप्त नहीं हैं । अतः इस विकास कार्य में स्वयंसेवी संस्थाओं का यथोचित

शेष पृष्ठ 38 पर

खाद्यान्न समस्या का समाधान

नैपाल सिंह

भारत एक कृषि-प्रधान देश है। यहां की 76.23 प्रतिशत जनसंख्या कृषि द्वारा अपने परिवार का पालन-पोषण करती है। यहां के लोगों की लगभग 97 प्रतिशत वस्तुएं भूमि से ही प्राप्त होती हैं। यहां की कृषि ज्यादातर मानसून पर निर्भर करती है। यहां की मिट्टी की उर्वरता तथा मानसून की अनुकूलता के फलस्वरूप वर्ष 1988–89 में देश में खाद्यान्न तिलहन का उत्पादन आशा से काफी अधिक हुआ। उल्लेखनीय है कि वर्ष 1990-91 में खाद्यान्न उत्पादन का लक्ष्य लगभग 16.6 करोड़ टन रखा गया था, जबकि उत्पादन 17.2 करोड़ टन हुआ। इसी तरह तिलहन का उत्पादन 1.56 करोड़ टन से बढ़कर 1.78 करोड़ टन हुआ।

हमारे देश में एक ओर जहां खाद्यान्न का उत्पादन काफी अधिक बढ़ रहा है वहां दूसरी ओर जनसंख्या भी (जनगणना 1990-91 के अनुसार) 84 करोड़ से ऊपर पहुंच गई है। यदि बढ़ती हुई जनसंख्या को नहीं रोका गया तो आने वाले वर्षों में देश के विकास में रुकावटें आ जायेंगी और बढ़ती हुई जनसंख्या को पेट भर भोजन प्राप्त नहीं हो सकेगा।

खाद्यान्न की आवश्यकता

यहां के लोगों के लिए आठवीं योजना के अन्त तक प्रतिवर्ष 18.6 करोड़ टन खाद्यान्न की आवश्यकता होगी तथा सन् 2000 तक यह आवश्यकता बढ़कर लगभग 23.5 करोड़ टन प्रति वर्ष हो जाएगी अर्थात् बढ़ती हुई आबादी के अनुसार, खाद्यान्न उत्पादन भी लगभग 6 करोड़ टन प्रतिवर्ष तक की वृद्धि करनी होगी।

भारतीय कृषि मंत्रालय द्वारा की गई गणना के अनुसार सन् 2000 तक भारत के लोगों को प्रति वर्ष खाद्यान्न की आवश्यकता निम्न सारणी में दिखाई गई हैं :

करोड़ टन में

	प्रमुख उपज	आवश्यकता (खाद्यान्न)	
(1)	गेहूँ	7.24	
(2)	चावल	9.59	अनुमानित
(3)	दाल	2.11	
(4)	गन्ना	24.6	
(5)	तिलहन	2.6	

समाधान

भारत में खाद्यान्न की स्थिति इतनी विकट नहीं हुई है कि वह नियंत्रण से बाहर हो। यदि समय रहते निम्न उपायों का सही ढंग से क्रियान्वयन किया जाए तो सन् 2000 तक 23 करोड़ टन को सरलता से अर्जित किया जा सकता है–

(1) अच्छे किस्म के बीजों का उत्पादन करके खाद्यान्न उत्पादन में काफी वृद्धि कर सकते हैं।

(2) भारत में मिट्टी, वर्षा तथा जलवायु अनेक प्रकार की पायी जाने के कारण 'कृषि-जलवायु योग' के लिए भिन्न-भिन्न प्रकार के बीज विकसित करने चाहिये।

(3) जलाशयों के अधिग्रहण क्षेत्र में जल प्रबन्ध को सुधारना होगा।

(4) उर्वरकों तथा न्यूट्रिएंटों का उचित ढंग से प्रयोग करने के साथ इन्हें गाँव के स्तर पर उपलब्ध कराना होगा।

(5) हमें पौधों की सुरक्षा के लिए कीटनाशकों का उपयोग कम करना होगा तथा इनके स्थान पर जैव-रसायनों का अधिक उपयोग करना चाहिए।

(6) भूमि की सिंचाई के समुचित प्रबन्ध के लिए देश के लगभग 7 लाख गांवों का विद्युतीकरण होने के साथ-साथ कम दर पर बिजली उपलब्ध होनी चाहिये।

(7) भारत के कुछ शुष्क भूमि क्षेत्रों में फसल उत्पादन बढ़ाना होगा। इसके लिए जल संरक्षण पर विशेष ध्यान रखना होगा।

(8) भारत के कुछ पूर्वी राज्यों में गेहूँ व चावल की पैदावार को बढ़ाने के लिए सार्थक प्रयास करने होंगे।

(9) कृषि-उत्पादों के लिए उचित मूल्य तथा बाजारी समर्थन मूल्य भी सुनिश्चित करने होंगे।

विकास

खाद्यान्न की समस्या पर विजय पाने के लिए ऊसर (बंजर) भूमि के विकास पर भी विशेष ध्यान देना चाहिये । देश में लगभग 9 करोड़ 20 लाख हेक्टेयर ऊसर भूमि है, जिसका एक-तिहाई भाग मध्य प्रदेश, उड़ीसा, महाराष्ट्र में है । राजस्थान में इस समय 1 करोड़ हेक्टेयर ऊसर भूमि है ।

देश में ऊसर (बंजर) भूमि के विकास के लिए पिछले तीन दशकों से प्रयास चल रहे हैं, लेकिन विशेष प्रयास सन् 1980 के दशक में प्रारम्भ हुआ था । सन् 1991-92 में ऊसर भूमि को विकसित बनाने के लिए एक विशेष कार्यक्रम चलाया गया, जिसके अन्तर्गत उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, बिहार, उड़ीसा, महाराष्ट्र, गुजरात, तमिलनाडु तथा राजस्थान में 59 लाख हेक्टेयर भूमि विकसित की गई है ।

हमें ऊसर भूमि विकास के साथ-साथ उसके बढ़ते हुए क्षेत्रफल पर रोक लगानी चाहिये । भूमि को ऊसर बनाने की भूमिका भू-क्षरण की होती है । आजकल 4 करोड़ हेक्टेयर ऐसी ऊसर भूमि है, जिसका निर्माण 'भू-क्षरण' से हुआ । भूमि के कटाव को रोकने के लिए वृक्षारोपण में विशेष ध्यान देना चाहिये ।

राष्ट्रीय वन नीति (1952) में कहा गया है कि समुचित पारिस्थितिकी का संरक्षण तथा समुन्नत अर्थव्यवस्था के लिए देश के 33 प्रतिशत भौगोलिक क्षेत्रफल पर वनों का होना जरूरी है ।

भूमि में लवणता की अधिकता से भी ऊसर (बंजर) भूमि की उर्वरता में कमी आती है । ऐसी स्थिति में लवणता से प्रभावित क्षेत्र में पहले धान एवं बरसीम की खेती करनी चाहिए, लेकिन आशानुकूल परिणाम तभी सामने आ सकते हैं, जब खेत में मेंडें बनाकर उन पर पौधे उगाये जायें ।

आखिर यह परिणाम निकलता है कि यदि भारत में ऊसर (बंजर) भूमि का विकास समुचित ढंग से हो जाता है तो सन् 2000 तक हम खाद्यान्न में आत्म-निर्भरता प्राप्त कर सकेंगे ।

इस कार्य को करने के लिए देश के हर नागरिक को जनसंख्या वृद्धि पर पहले रोक लगाना तथा फिर सरकार के साथ-साथ कृषि करने में पूर्णतः सहायता करनी होगी तथा देश में ज्यादातर वन क्षेत्रफल भी बढ़ाने होंगे ।

ग्राम - बिसनपुरा डा० नोएडा
जिला - गाजियाबाद (उ०प्र०)
नोएडा - 201 301

पृष्ठ 36 का शेष भाग

एवं यथासंभव सहयोग लिया जाए । हमारे देश में करीबन पांच हजार स्वयंसेवी संस्थाएं हैं जो जनता के बीच रह कर काम करती हैं । अतः उन्हें जनता की, इन समस्याओं का इनसे सम्बन्धित कठिनाइयों का तथा इनके निवारण का ज्यादा सही ज्ञान है ।

सारांश

प्रसार रणनीति को स्थानीय संस्थाओं को आत्म-निर्भरता की भावना लाने के लिए प्रयत्नशील होना चाहिए । ग्रामीण विकास कार्यों में अब तक स्थानीय निकायों को अधिकतर नजर अंदाज किया जाता रहा है । कुछ नीति निर्माताओं का मत है कि विकास कार्यक्रमों में पंचायतों और समाज की भागीदारी विकास प्रक्रिया को धीमा करती है । विभिन्न अध्ययनों ने यह साबित कर दिया है कि सामाजिक भागीदारी से विकास प्रक्रिया निश्चित रूप से और तीव्र गति से आगे बढ़ती है । पंचायती राज को लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण के तहत व्यापक अधिकार देने के लिए सरकार कृत संकल्प है । ग्राम समाज में शिक्षा, प्रशिक्षण, सुझाव एवं अच्छे नेतृत्व के प्रसार से सामुदायिक विकास के उद्देश्यों को फलीभूत होने में सफलता अवश्य मिलेगी । सरकार के विभिन्न उपायों से ग्रामीण परिवेश में जीवन-स्तर को सुधारने की प्रक्रिया को भी पंचायत संस्था के सबल होने से बल मिलेगा, कृषि उत्पादन की दर बढ़ेगी तथा ग्रामीण समाज में ऊपर उठने की इच्छा शक्ति प्रबल होगी और यही सब ग्रामीण विकास की आधारशिला है ।

केन्द्रीय मृदा लवणता
अनुसंधान संस्थान
करनाल-132 001

कितना प्रदूषित है हमारा पेयजल ?

अंकुश्री

जीवन के अस्तित्व के लिये वायु और जल का बहुत ही अधिक महत्व है लेकिन आज शुद्ध वायु तो नहीं मिल पाती, जल भी बुरी तरह प्रदूषित हो चुका है। प्रदूषणमुक्त पेयजल की उपलब्धता हमारे सामने प्रश्न-चिन्ह की तरह खड़ी है।

पेयजल हमें तीन तरह से उपलब्ध होता है–भूमिगत जल से, रुके हुए जल से और बहते हुए जल से। पेयजल के मुख्य स्रोत नदी, तालाब और कुएं हैं। गांवों में नलकूपों द्वारा और शहरों में पाइप लाइनों से पेयजल की व्यवस्था की जाती है।

भूमिगत जलस्रोत के लिये कुआं एक सर्वव्यापी साधन है। तालाब की खुदाई करके भी भूमिगत जल का उपयोग किया जाता है। कुएं में सिर्फ भूमिगत जल का ही उपयोग होता है जबकि तालाब में भूमिगत और बाहरी जल का जमाव होते रहता है। नलकूपों द्वारा भूमिगत जल का उपयोग आज सर्वाधिक सुलभ और सामान्य हो गया है। जल मिनारों से पाइप लाइनों द्वारा जलापूर्ति की व्यवस्था भी भूमिगत जल का ही उपयोग है। वैसे पहाड़ी क्षेत्रों में बांधे हुए पानी का पाइप लाइनों द्वारा उपयोग किया जाता है, जबकि नदी-नालों के जल का उपयोग बहते हुए जल का उदाहरण है। पहाड़ी नालों से बहते पानी को छोटे से गड्ढे में एकत्र करके भी उपयोग में लाया जाता है। ऐसे गड्ढों को चुआं कहते हैं।

वर्ष 1977 में संयुक्त राष्ट्र जल सम्मेलन की अर्जेंटिना में हुई बैठक में लिये गये निर्णय के अनुसार 1981-90 को अंतर्राष्ट्रीय जलापूर्ति एवं स्वच्छता दशक के रूप में मनाया गया। इसका परिणाम प्रभावकारी अवश्य रहा, परंतु शुद्ध पेयजल की व्यवस्था की दिशा में हुआ प्रयास ऊंट के मुंह में जीरा ही साबित हुआ।

पानी देखने में स्वच्छ होने के बावजूद प्रदूषित रह सकता है। अच्छे और उपयोगी पानी की आम पहचान है उसका स्वच्छ और स्वादिष्ट होना। पानी में आम तौर पर दो प्रकार की अशुद्धियां पायी जाती हैं। लेकिन पानी की हर अशुद्धि हानिकारक ही नहीं होती कुछ अशुद्धियां लाभदायक भी होती हैं। पानी को पीने योग्य बनाने के लिये जल उपचार केन्द्रों में हानिकारक अशुद्धियों को ही दूर किया जाता है। पूर्ण रूप से दूर नहीं की जा सकने वाली अशुद्धियों को इस हद तक कम कर दिया जाता है कि वे स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं डाल सकें।

सिर्फ हानिकारक अशुद्धियों की मौजूदगी ही पानी को पीने के अयोग्य नहीं बनातीं, कुछ तत्वों-अवयवों की कमी से भी वह पीने योग्य नहीं रहता। जैसे फ्लोराइड की मात्रा जिस पानी में प्रति लीटर एक मिलीग्राम से कम रहती है, उसे पीने से बच्चों के दांत खोखले होने की आशंका बनी रहती है। पानी में आयोडीन के अभाव से घेघा रोग हो जाता है। कैल्शियम, मैग्नीशियम आदि की थोड़ी मात्रा भी पीने योग्य पानी में रहनी चाहिये।

लेकिन ठीक इसके विपरीत कुछ तत्व ऐसे हैं, जिनकी थोड़ी मात्रा भी पानी को पीने योग्य नहीं रहने देती। इन तत्वों में प्रमुख हैं–आर्सेनिक बेरियम, कैडमियम, साइनाइड्स, लेड, सैलिनियम, सिल्वर, कॉपर इत्यादि इन तत्वों की हल्की मौजूदगी से पानी विषैला हो जाता है।

पानी में अनेक तरह के जीवाणु मिले होते हैं। इनमें से 90 प्रतिशत से भी अधिक जीवाणु हमारे लाभ के होते हैं। लाभकारी जीवाणुओं में से कुछ जीवाणु हानिकारक जीवाणुओं को अपना भोजन बना कर हमें लाभ पहुंचाते हैं। लेकिन कुछ जीवाणु हमारे स्वास्थ्य के लिये हानिकारक होते हैं। हैजा, पीलिया जैसी बीमारियों को फैलाने में इन हानिकारक जीवाणुओं का कुदान रहता है।

पानी में दो प्रकार की अशुद्धियां होती हैं। एक, जो हमें नंगी आंखों से दिखायी देती हैं। जैसे कूड़ा-करकट, उद्योगों से निकला रसायन एवं राख, फूल-मालाएं, जूठा भोजन, मल-मूत्र आदि। दूसरे प्रकार की अशुद्धियां वे हैं, जो सूक्ष्मदर्शी होती हैं और नंगी आंखों से दिखायी नहीं देती तथा जिनकी जानकारी रसायनिक विश्लेषणों से ही हो पाती है। सच पूछा जाये तो ये सूक्ष्मदर्शी या अदृश्य गंदगी ही स्वास्थ्य के लिये विशेष तौर पर हानिकारक होती हैं।

नदियों या जलस्रोतों पर तरह-तरह के लोग आते हैं । वे जिस नदी का पानी पीते हैं, उसी में नहाते, कपड़ा और बर्तन धोते हैं । मल-मूत्र को भी उसी नदी में बिना किसी उपचार के बहा देते हैं । यह उत्सर्जन जलस्रोतों को प्रदूषित करता है । संक्रमित मानव द्वारा प्रायः 100 प्रकार के वायरस उत्सर्जित किये जाते हैं । इनमें से अधिकतर वायरस पानी को बिना गरमाये उपयोग में लाने से स्वस्थ व्यक्ति को भी संक्रमित कर डालते हैं ।

हुगली का पानी, कपड़ा, पटसन, कागज, शराब, चमड़ा आदि के डेढ़ सौ से अधिक कारखानों के उच्छीष्ट को बिना उपचार के बहा दिये जाने के कारण बुरी तरह प्रदूषित हो चुका है ।

गंगा का जल तो जितना पवित्र माना जाता था, अब उतना ही अधिक प्रदूषित माना जाने लगा है । कानपुर में चमड़ा, कपड़ा और अन्य उद्योगों के कारण गंगा का पानी काला हो जाता है । मोकामा में शराब और जूता कारखानों के कारण गंगा का पानी हानिकारक साबित हो रहा है । सिर्फ गंगा के तट पर प्रतिवर्ष 30 हजार प्राणियों का दाह-संस्कार किया जाता है । इससे करीब डेढ़ लाख टन राख प्रति वर्ष गंगा में बहती है । दूर-दराज से लोग वाराणसी में आकर गंगा में अस्थियां बहाते हैं । इससे उनकी धार्मिक भावनाएं भले ही संतुष्ट हो जाती हैं, लेकिन नदी बुरी तरह प्रदूषित हो जाती है ।

अपमार्जकों (डिटरजेंट्स) के कारण प्रदूषित हुई नदियों में मछलियां ठीक से नहीं जी पाती जबकि मछलियों एवं अन्य जलीय जीवों का प्रदूषण निवारक महत्व बहुत ज्यादा है ।

गंगा की कुल लम्बाई 2035 किलोमीटर है । इसमें 480 किलोमीटर अर्थात् 23.5 प्रतिशत गंगा प्रदूषित हो चुकी है । यमुना की कुल लम्बाई 1014 किलोमीटर है । इसमें 482 किलोमीटर अर्थात् करीब 50 प्रतिशत यमुना प्रदूषित हो चुकी है । हुगली, गंगा या यमुना का प्रदूषण तो सिर्फ उदाहरण है । कृष्णा, कावेरी, साबरमती, नर्मदा, भीमा, ताप्ती, वैनगंगा, गोदावरी आदि नदियों का जल भी बुरी तरह प्रदूषित हो गया है । इन सारी नदियों का जल सभी जगह पेय योग्य नहीं रह गया है । जबकि इन नदियों के किनारे हमारे देश की सभ्यता पनपी है और संस्कृति का आज भी विकास हो रहा है ।

कृषि प्रधान क्षेत्र की नदियों के पानी में खेत से आये उर्वरकों और कीटनाशकों की मात्रा अधिक रहती है, जिससे पानी पीने योग्य नहीं रह पाता । भारतीय चिकित्सा विज्ञान अनुसंधान परिषद् के अध्ययनों के अनुसार भारतीयों की देह में डी०डी०टी० की काफी मात्रा मौजूद है । डी०डी०टी० की यह मात्रा पानी के माध्यम से ही मनुष्य के शरीर में पहुंचती है ।

खनिकर्म के चलते भी पेयजल का प्रदूषण होता है । सिंहभूम के गांवों में लौह अयस्क एवं अन्य खदानों से बहे लाल जल के कारण शुद्ध पेय जल का इतना अधिक अभाव है कि लोग अशुद्ध जल पीकर ही काम चलाते हैं और बीमार पड़ते हैं तथा कमजोर जीवन जीने के लिये मजबूर रहते हैं । यही हाल है रोहताश के अमझोर स्थित पाइराइट्स फास्फेट्स एंड केमिकल्स फैक्टरी के कारण, वहां के लोगों का है । इस प्रदूषित जल को पी-पीकर लोग बीमार और कमजोर होते जा रहे हैं । कोयला या अन्य खदान क्षेत्रों का भी यही हाल है ।

यह सुनने में बड़ा अजीब-सा लगता है कि जल में रह कर भी प्यासे रहा जाये । मगर बात कुछ ऐसी ही है । धरती का दो-तिहाई भाग जल है, जिसका आयतन करीब 15,000 लाख घन किलोमीटर है किंतु इसका सिर्फ 2 प्रतिशत ही मीठा (मृदु) जल है । इस अल्प प्रतिशत मीठे जल में से भी 240 लाख घन किलोमीटर ग्लेशियर के रूप में जमा हुआ है । बाकी जो मीठा जल है, वह जैसा कि ऊपर वर्णित है, प्रदूषण की मार झेल रहा है ।

शुद्ध पेयजल की विभिन्न क्षेत्रों में बहुत कमी है । इसका एक प्रमुख कारण जल का पीने के इतर कार्यों में प्रयोग भी है । विभिन्न जटिल सिंचाई परियोजनाओं के माध्यम से बहुत बड़ी मात्रा में जल का उपयोग हो जाता है ।

विभिन्न उद्योगों में भी अत्यधिक मात्रा में जल की खपत होती है । एक टन इस्पात उत्पादन के लिये 6 टन जल की, एक टन अल्युमीनियम उत्पादन के लिये 1500 टन जल की और एक टन रबर उत्पादन के लिये 2500 टन जल की आवश्यकता पड़ती है । इससे उद्योगों में जल की खपत का सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है ।

उद्योगों और शहरों से बहाये गये उच्छीष्टों तथा अन्य विभिन्न कारणों से नदियां बुरी तरह प्रदूषण की मार झेल रही हैं, इन प्रदूषित नदियों के कारण समुद्री किनारे और समुद्र का भी प्रदूषण हो रहा है । प्रदूषण चाहे जिस किसी तरह का हो, उसका असर घुमा-फिरा कर मानव जीवन पर ही पड़ता है ।

अतः जल की उपादेयता को देखते हुए यह आवश्यक है कि इसका कम से कम उपयोग कर अधिक से अधिक काम चलाया जाये । उद्योगों से निकले उच्छीष्ट जल का पुनः उपयोग कर जल को औद्योगिक प्रदूषण से बचाया जा सकता ।

शेष पृष्ठ 42 पर

जल ही जीवन है

डॉ० विनोद गुप्ता

पानी मानव की मूल जरूरत है। भोजन के बिना व्यक्ति कुछ हफ्ते भले ही जी ले, परंतु पानी के बिना वह शायद एक सप्ताह भी जी नहीं सकता। इसलिए कहा गया है कि "जल ही जीवन है।"

जीव-जन्तु हों या पेड़ पौधे अथवा मानव, सभी में जल का अंश अवश्य पाया जाता है। मानव शरीर में 70 प्रतिशत जल का भाग है। यदि शरीर को पर्याप्त पानी न मिले तो वह मुरझाने लगता है। जल एक ऐसा प्राकृतिक टॉनिक है जो सर्वत्र सुलभ है और जिसे बिना कोई विशेष खर्च किए गरीब-अमीर हर कोई इस्तेनाल करके अपने स्वास्थ्य को उत्तम रख सकता है। यह एक ऐसा टॉनिक है जो नवजात शिशु से लेकर वृद्ध स्त्री-पुरुषों के लिए समान रूप से गुणकारी है और इसकी कमी समान रूप से प्रभावित भी करती है।

शरीर में जल के एक नहीं अनेक कार्य हैं। जल जहां एक ओर पाचन में सहायक बनता है, वहीं शरीर की रासायनिक क्रियाओं को संतुलित बनाए रखने में भी उसकी महत्वपूर्ण भूमिका है। जल ही शरीर में तापक्रम को नियमित करके शरीर की गर्मी को समान रूप से बनाए रखता है। रक्त को तरल व गतिशील बनाए रखने में तो जल विशेष उपयोगी है। जल से ही मानव शरीर की हड्डियां एवं जोड़ क्रियाशील रहते हैं। यदि जल न हो तो शरीर में पैदा होने वाले विषैले पदार्थ शरीर को हानि पहुंचा सकते हैं किन्तु जल का सेवन इन दूषित पदार्थों को पेशाब, पाखाने एवं पसीने के रूप में बाहर निकाल कर शरीर को स्वस्थ बनाये रखता है।

पानी की आवश्यकता जलवायु एवं रहन-सहन के जीवन-स्तर पर निर्भर करती है। सर्दी के मौसम में पानी की कम आवश्यकता पड़ती है एवं गर्मी के मौसम में अधिक।

सामान्य कार्य करने वाले व्यक्ति को प्रतिदिन एक हजार मिली लीटर पानी की आवश्यकता पड़ती है। शारीरिक मेहनत करने वालों के लिये पानी की अधिक आवश्यकता होती है। इसी तरह दूध पिलाने वाली मां को अधिक पानी पीना चाहिये।

वही पानी जो जीवन का संबल है, यदि प्रदूषित हो तो त्रासद बन जाता है अतः पेयजल शुद्ध होना चाहिए। यानी शुद्ध जल रंगहीन, गंधहीन और सभी रोगों के कीटाणुओं एवं रासायनिक मिश्रणों से मुक्त होना चाहिए।

विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार विकासशील देशों में अब भी हर वर्ष दो करोड़ पचास लाख लोग गंदे पानी के कारण होने वाली बीमारियों की वजह से काल का ग्रास बनते हैं। भारत में 80 प्रतिशत स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं के लिए दूषित पानी ही दोषी है। राष्ट्रीय पर्यावरण इन्जीनियरी अनुसंधान संस्थान के अनुसार देश के अंदर 70 प्रतिशत पानी ऐसा है जो मनुष्यों के इस्तेमाल के लिए सही नहीं है। इन बीमारियों की वजह से देश को हर वर्ष सात करोड़ 30 लाख कार्यदिवसों की हानि होती है तथा राष्ट्रीय कोष को हर वर्ष 700 करोड़ रुपये से ज्यादा नुकसान होता है।

भारत में, विशेषकर, ग्रामीण क्षेत्रों में होने वाली बीमारियों का एक बड़ा भाग दूषित पानी से फैलने वाली बीमारियों का है। इन बीमारियों में अतिसार, पेचिस, हैजा, टाइफाइड, पीलीया, कुष्ठ रोग, आंखों की बीमारी तथा खुजली आदि शामिल हैं। दूषित जल से उपजी ये बीमारियां मौत का कारण भी बन सकती हैं।

घरेलू जरूरतों के लिए जो पानी हम इस्तेमाल करते हैं वह रोज पैदा करने वाले कीटाणुओं से मुक्त होना चाहिए। घरों में उपयोग किए जाने वाले पानी को उबालकर छान लेना चाहिए। बीमारियों के वक्त तो ऐसा करना बहुत जरूरी है।

गांवों में पानी सामान्यतः कुओं से ही लाया जाता है। निचले कुओं का पानी बड़ी आसानी से प्रदूषित हो सकता है। इसे रोकने के लिए कुछ कदम उठाए जा सकते हैं। प्रदूषित पानी को कुएं में प्रवेश करने से रोकने के लिए कुएं के पास की जमीन का ढलान कुएं के मुंह की विपरीत दिशा में होना चाहिए। कुएं के आसपास के भाग को साफ रखना चाहिए और उस पर पत्थर, ईंट का फर्श बना देना चाहिए। कुएं को पर्याप्त गहराई तक खोदना चाहिए ताकि ऊपरी जमीन से रिसता मैला

समन्वित ग्रामीण विकास के एक भाग के रूप में देश के चुने हुए 50 लाख जिलों के ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं और बच्चों के विकास की एक योजना प्रायोगिक रूप में चलाई जा रही है। योजना का उद्देश्य महिलाओं को संगठित करना और आय-उत्पादक गतिविधियों को बढ़ावा देना है। इस कार्यक्रम पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है। वर्ष 1988-89 के दौरान इस कार्यक्रम पर 70 लाख रुपये व्यय किए गये थे। वर्ष 1989-90 में इस कार्यक्रम पर व्यय की जाने वाली यह राशि बढ़ाकर 458 लाख रुपये कर दी गई है। अगले वर्ष के दौरान इस कार्यक्रम के लिए 5 करोड़ रुपये की राशि स्वीकृत की गई। 5 हजार समूहों को सहायता के लिए चुना गया। सहायता प्राप्त करने वालों की संख्या पहले ही 20 हजार से अधिक हो गई।

ग्रामीण-रोजगार

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम तंगी के दिनों में ग्रामीण युवाओं को पूरक रोजगार उपलब्ध कराने के साथ ही सामुदायिक सम्पत्ति का सृजन भी करते हैं। इस योजना के अन्तर्गत श्रमिकों को मजदूरी का आंशिक भुगतान अनाज के रूप में किया जाता है। इस कार्यक्रम में भी लघु सिंचाई प्रबन्ध, सम्पर्क सड़कों, स्कूल पंचायत भवनों, वनों, खेल के मैदान जैसे सामुदायिक उपयोग के निर्माण कार्यों पर विशेष बल दिया जाता है। विगत पांच वर्षों के दौरान इस पर 1819 करोड़ रुपये की राशि व्यय की गई और प्रति वर्ष 300 से 400 श्रम दिवसों के बराबर रोजगार जुटाया गया। इस कार्यक्रम के द्वारा 9.5 लाख हैक्टेयर क्षेत्र में भू-संरक्षण और भूमि को कृषि योग्य बनाया गया। ग्रामीण क्षेत्र में 4.28 लाख कि०मी० लम्बी सड़कों का निर्माण एवं स्कूल तथा सामुदायिक उपयोग के लिए 2 लाख भवनों का निर्माण किया गया।

ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारन्टी कार्यक्रम में प्रत्येक भूमिहीन श्रमिक परिवार के कम से कम एक सदस्य को प्रति वर्ष 100 दिन का रोजगार उपलब्ध कराने का प्रावधान है। इस योजना के अन्तर्गत भी मजदूरी का एक भाग अनाज के रूप में दिया जाता है। वर्ष 1984-85 के दौरान राज्य सरकारों द्वारा सुझायी गई राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम-ग्रामीण भूमिहीन रोजगार कार्यक्रम के लिए ग्रामीण विकास मंत्रालय में गठित केन्द्रीय समिति द्वारा स्वीकृत विशेष परियोजनाओं के लिए 400 करोड़ रुपये की राशि निर्धारित की गई।

विभिन्न राज्यों और केन्द्र शासित राज्यों में क्रियान्वयन के लिए 318 परियोजनाओं को स्वीकृति दी जा चुकी है। इन परियोजनाओं पर 900 करोड़ रुपये की लागत आयेगी।

भूमि सुधार पर बल

भूमि सुधारों के अभाव में भूमिहीन श्रमिकों को अभी तक काफी मुसीबतों और शोषण का सामना करना पड़ा है। अब किसी एक व्यक्ति के पास भूमि की अधिकतम सीमा निर्धारित कर दी गई है और भूमिहीन लोगों में वितरण के लिए अतिरिक्त भूमि का सरकार द्वारा अधिग्रहण कर लिया गया है। वितरित की गई भूमि के विकास के लिए ऋण और बीज एवं उर्वरक आदि आदानों के रूप में सरकारी सहायता उपलब्ध करायी जा रही है।

वर्ष 1972 में राष्ट्रीय निर्देशों के अनुरूप भूमि हदबन्दी अधिनियम के लागू होने के बाद से अभी तक 43.32 लाख एकड़ भूमि को अतिरिक्त भूमि घोषित किया जा चुका है। इसमें से 22.42 लाख एकड़ भूमि को 16.82 लाख भूमिहीन श्रमिक परिवारों में वितरित किया जा चुका है।

राज्य सरकारों से भूमि सुधारों को तेजी से लागू करने के लिए कहा गया है।

समस्याग्रस्त भूमि की देखभाल

समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत शुरू किये गये दो अन्य विशेष कार्यक्रम सूखा-ग्रस्त क्षेत्र और रेगिस्तान विकास कार्यक्रम हैं। पहले कार्यक्रम के अन्तर्गत शुष्क भूमि खेती, भूमि एवं जल संरक्षण और चरागाहों के विकास को बढ़ावा दिया जाता है। यह कार्यक्रम इस समय 13 राज्यों के 511 खंडों में चलाया जा रहा है। विगत पंचवर्षीय योजना के दौरान केन्द्र एवं विभिन्न राज्यों ने इस कार्यक्रम पर 320 करोड़ रुपये व्यय किए।

रेगिस्तान विकास कार्यक्रम का उद्देश्य रेगिस्तान के विस्तार पर नियंत्रण करना और इन क्षेत्रों के निवासियों को आय और उनके उत्पादों को बढ़ाने में सहायता देना है। यह कार्यक्रम गुजरात, हरियाणा और राजस्थान के 18 गर्म रेगिस्तानी जिलों और हिमाचल प्रदेश और जम्मू-कश्मीर के 3 ठंडे रेगिस्तानी जिलों में क्रियान्वित किया जा रहा है। कार्यक्रम के अन्तर्गत वन लगाने, चरागाहों का विकास और रेत के टीलों को स्थिर बनाने की परियोजनाओं पर कार्य किया जाता है। पिछले पांच वर्षों

के दौरान इस कार्यक्रम पर 71 करोड़ रुपये की राशि व्यय की गई ।

समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के क्रियान्वयन में आम आदमी और स्वैच्छिक संगठनों को शामिल करने पर विशेष बल दिया जा रहा है । स्वैच्छिक संगठनों को सहायता पंजीकृत समितियों और पीपुल्स एक्शन डेवलैपमेंट (इंडिया) के माध्यम से उपलब्ध करायी जाती है ।

हैदराबाद स्थित राष्ट्रीय ग्रामीण विकास संस्थान विकास कार्यों में जुटी हुई विभिन्न ऐजेन्सियों को प्रशिक्षण देता है । संस्थान "ग्रामीण विकास" के लिए नई तकनीकों और प्रक्रियाओं का पता लगाता है । इसके साथ ही संस्थान विकास कार्यों के संदर्भ में अनुसंधान और मूल्यांकन करता है ।

आर्थिक विकास हेतु

स्वतंत्रता के बाद भारत ने कृषि के क्षेत्र में लगातार उन्नति की । इसका ही परिणाम है कि भारत की गणना आज अन्न उत्पादक देशों में होने लगी है । विदेशी गेहूं के आयात पर निर्भर रहने वाला भारत कुछ ही वर्षों में अन्न के मामले में आत्मनिर्भर हो गया है । यह सब व्यापक प्रयासों और नए-नए अनुसंधानों से ही सम्भव हो सका । छठे दशक के आखिरी वर्ष और सातवें दशक के प्रारंभिक वर्ष में ही भारत ने "हरित क्रांति" कर दिखाई ।

कृषि क्षेत्र में भी लगातार वृद्धि हुई है । हालांकि औद्योगिकीकरण की वजह से छोटे या बड़े शहरों और महानगरों के लगातार फैलाव ने समीपवर्ती गांवों का भी शहरीकरण कर दिया । इससे कृषि क्षेत्र में भी कमी आई है और आती जा रही है । लेकिन वर्ष 1949-50 के दौरान भारत का कृषि क्षेत्र 9 करोड़ 92 लाख हजार हेक्टेयर था जो कि 1965-66 में बढ़कर 11 करोड़ 51 लाख हेक्टेयर हो गया । इस अवधि में खाद्यान्नों के उत्पादन में भी वृद्धि हुई जो कि 1949-50 में 5 करोड़ टन था लेकिन 1965-66 में यह 7 करोड़ 23 लाख टन से भी अधिक हो गया । पर जिस गति से खाद्यान्नों का उत्पादन बढ़ा उससे भी कहीं अधिक गति से आबादी बढ़ी--जिसकी वजह से एक करोड़ टन वार्षिक का आयात किया गया । वर्ष 1985-86 में तो रिकार्ड उत्पादन 15.4 करोड़ टन से भी अधिक हुआ ।

हाल के वर्षों में भारत ने कृषि उत्पादन में तेजी से वृद्धि की । उसकी वजह से 2.20 करोड़ टन खाद्यान्नों का सुरक्षित भंडार बनाना भी सम्भव हो सका । लेकिन पिछले दो-तीन वर्षों में भयंकर सूखे ने अनाज उत्पादन में भी बाधा पहुंचायी । लेकिन 1988-89 में अच्छी वर्षा ने कई वर्षों से सूखाग्रस्त क्षेत्रों को न केवल राहत पहुंचाई बल्कि कृषि उत्पादन से लक्ष्यों को भी पूरा कर दिखाया ।

सरकार ने छोटे तथा सीमान्त किसानों की सहायता की योजना के अन्तर्गत 10.90 लाख हैक्टेयर से अधिक अतिरिक्त सिंचाई क्षमता का सृजन किया ।

राष्ट्रीय तिलहन विकास परियोजना के अन्तर्गत 17 राज्यों के 180 जिलों को शामिल किया गया है । वर्ष 1984-85 के प्रारम्भ में इस परियोजना के सकारात्मक परिणाम रहे हैं ।

ग्रामीण विकास से ही छोटे और सीमांत किसानों का भी विकास हो सकता है । इस बात को ध्यान में रखकर भारत सरकार ने प्रौद्योगिकी मिशन गठित किये हैं ।

राष्ट्रीय पेयजल मिशन का गठन 1986 में किया गया । इसका उद्देश्य समस्याग्रस्त गांवों में पेयजल सुविधायें पहुंचाने का विशिष्ट कार्य करना, वैज्ञानिक तरीके से जल स्त्रोतों का पता लगाना और जल में गिनी कृमि को नष्ट करने तथा फ्लोराइड लौह व खारेपन की अधिकता को दूर करने के बारे में विशिष्ट उप-मिशनों की सहायता से जल की गुणवत्ता में सुधार लाना है ।

सातवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान 1.61 लाख समस्याग्रस्त गांवों को स्वच्छ पेयजल आपूर्ति योजना के अन्तर्गत शामिल किया गया । वर्ष 1988-89 और 1989-90 में 62,008 गांवों को इस योजना में शामिल करने की एक कार्य योजना तैयार की गयी ।

देश में मिनी मिशन गतिविधियों के कार्यान्वयन के लिए 55 जिले चुने गये हैं । देश के सभी समस्याग्रस्त गांवों को पानी उपलब्ध कराने का लक्ष्य रखा गया है । सातवीं योजना के अन्त तक देश के विभिन्न भागों में करीब दस लाख हैंडपम्प लगा दिए गये हैं ।

तिलहनों से सम्बन्धित प्रौद्योगिकी मिशन का गठन 1986 के प्रारम्भ में सभी सरकारी ऐजेंसियों की एक टास्क फोर्स के रूप में किया गया । इसकी सिफारिशों पर सरकार ने तिलहनों के उत्पादन, आयात, वितरण और मूल्य तय करने के लिए एक समेकित नीति का अनुमोदन किया है ताकि तिलहनों के मामले में आत्मनिर्भरता प्राप्त करने का काम तेजी से हो सके ।

देश में तिलहनों के उत्पादन की गति बहुत धीमी रही है। इसकी कमी को पूरा करने के लिए सरकार को पिछले 5 वर्षों के दौरान 4700 करोड़ रुपये के खाद्य तेलों का आयात करना पड़ा। हालांकि देश में तिलहन उत्पादन का क्षेत्र 1.80 करोड़ हैक्टेयर है लेकिन इसके बावजूद आयात के मामले में खाद्य तेलों का स्थान खनिज तेलों के बाद दूसरा है।

प्रौद्योगिकी मिशन के परिणाम एक वर्ष की अवधि में अच्छे रहे हैं और तिलहनों की अच्छी फसल से यह सम्भावना बढ़ी है कि खाद्य तेलों के आयात में कम से कम 50 प्रतिशत की कमी तो हो जायेगी।

खाद्य तेलों की वार्षिक खपत 1976 तक 15 वर्षों में मात्र 0.6 प्रतिशत थी लेकिन बाद के 10 वर्षों में यह खपत 4.7 प्रतिशत हो गयी। यह वृद्धि भी सस्ते आयात किए गये खाद्य तेलों से संभव हुई हालांकि विश्व के अनेक देशों की तुलना में आज भी तिलहनों की खपत के मामले में भारत काफी पीछे है।

सरकार ने जो समेकित नीति प्रौद्योगिक मिशन की सिफारिशों के आधार पर अनुमोदित की उसके 5 अंग हैं :

1. उत्पादन बढ़ाने के लिए टैक्नोलॉजी आदान आदि उपलब्ध कराकर किसानों को सहायता देना।

2. सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अन्तर्गत मूल्यों की समीक्षा।
3. मूल्य स्तरों का निर्धारण।
4. मूल्यों को निर्धारित स्तरों पर बनाये रखने के उद्देश्य से कमी के समय बाजार में वितरण के लिए बफर-स्टॉक बनाने हेतु राष्ट्रीय विकास बोर्ड द्वारा देश में उत्पादित तिलहनों, खाद्य तेलों की उचित मूल्यों पर खरीद।
5. समेकित नीति के कार्यान्वयन की देख-रेख करने के लिए मंत्रिमंडलीय सचिव की अध्यक्षता में उच्चाधिकार प्राप्त समिति।

पिछले दो वर्षों में तिलहनों की 40 नयी किस्में निकाली गई हैं जिनसे उत्पादन में राष्ट्रीय औसत के मुकाबले चौगुनी तथा किसानों की स्थिति में दुगुनी वृद्धि हो सकती है। देश के 240 जिलों में 1988-89 में शतप्रतिशत केन्द्रीय सहायता से 35 करोड़ रुपये का अभिवृद्धि कार्यक्रम शुरू किया गया है।

म० नं० 540 थाना उद्यान,
नरेला, दिल्ली-110 040

राजस्थान में सूखा और अकाल की समस्या व समाधान

प्रो. पी.सी. मीना

जलाभाव या सूखा उस स्थिति का द्योतक है,जिसमें अनावृष्टि के कारण भूमि की सतह पर एवं भूगर्भ में पानी का नितान्त अभाव उत्पन्न हो जाता है। मौसम विभाग उस अवस्था को सूखा मानता है जब वर्षा सामान्य की 75% हो तथा भयंकर सूखा वह स्थिति है जब वर्षा सामान्य की 50% या कम हो। सूखा यदि कारण है तो अकाल उसका परिणाम । राजस्थान में औसतन 45 सेंन्टीमीटर वर्षा होती है। राज्य में 171.64 लाख हैक्टेयर भूमि कृषि योग्य है, जिसमें से मात्र 40.14 लाख हैक्टेयर भूमि पर ही सिचांई सुविधाएं उपलब्ध हैं । इस प्रकार सूखा और अकाल राजस्थान की प्रकृति का स्थाई स्वभाव बन गया है, तभी तो किसी ने कहा है:-

पग पूगल धड़ कोटडे, बाहु बाड़मेर, जोये लादे जोधपुर, ठावो जैसलमेर।

अर्थात् अकाल या सूखे के पैर पूंगल यानि बीकानेर में है, धड़ कोटडे यानि मारवाड़ में है, भुजाएं बाड़मेर (मालानी) में है और तलाश करने पर यह जोधपुर में भी मिल जाता है, किन्तु जैसलमेर में तो इसका खास ठिकाना (निवास) ही है।

राजस्थान में सन् 1952-53 से 1989-90 तक के 38 वर्षों में से केवल 5 वित्तीय वर्ष ऐसे रहें हैं, जिसमें प्रदेश को सूखे का मुकाबला नहीं करना पड़ा, लेकिन विगत 33 वर्षों में सूखे की सघनता समान नहीं रही है । सूखे की गहनता की स्थिति निम्नवत् हैं :-

नौ वर्षों में राजस्थान के समस्त जिले अकाल की चपेट में रहे हैं।

सात वर्षों में 20 से अधिक जिले अकाल से प्रभावित रहे हैं।

ग्यारह वर्षों में 11 से 20 जिले अकाल से प्रभावित रहे हैं।

गत 33 वर्षों में अकाल का मुकाबला करने पर राज्य को 1775 करोड़ रुपये खर्च करने पड़े, जिसमें से अधिकांश राशि भारत सरकार से अकाल सहायता के रूप मे प्राप्त हुई। सातवी पंचवर्षीय योजना 1985-90 के दौरान अकाल पर काबू पाने के लिये 1225 करोड़ रुपये का व्यय हुये, जिसमें से 617 करोड़ रुपये केवल 1987-88 मे व्यय किए गए।

राजस्थान के कुल 3.42 लाख वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में से 2.09 लाख वर्ग कि.मी. 61 प्रतिशत मरुस्थलीय क्षेत्र, 0.27 लाख वर्ग कि.मी. 7.8 प्रतिशत सूखा सामान्य क्षेत्र और 0.20 लाख वर्ग कि.मी. 5.7 प्रतिशत जनजाति बाहुल्य क्षेत्र है। कहने का तात्पर्य यह है कि मात्र 25 प्रतिशत सामान्य क्षेत्र हैं।

सूखा : कारण और प्रभाव

प्राकृतिक कारण

अनिश्चित् असमान और अपर्याप्त मानसून वर्षा (अनावृष्टि); वनों का अभाव एवं निरन्तर वनों की क्षति लगातार फैलता मरूस्थल; ओलावृष्टि, पाला, टिड्डी एवं अन्य फसल नाशक कीड़े और जानवर और पर्यावरण में असन्तुलन हैं।

मानवीय या आर्थिक कारण

प्राकृतिक जलस्त्रोतों के पर्याप्त विदोहन का प्रभाव; वनों की रक्षा एवं वृक्षारोपण के प्रति उदासीनता; पानी का अवैज्ञानिक एवं अतार्किक उपयोग; स्थाई जल नीति का अभाव; अकाल से निपटने की दीर्घकालीन योजना का न होना; आवश्यक वस्तुओं की कीमतों में वृद्धि,; वस्तुओं का संग्रह एवं कालाबाजारी; दोषपूर्ण वितरण प्रणाली; मुनाफाखोरी एवं भ्रष्टाचार और क्रय शक्ति का निरन्तर ह्रास हैं।

अकाल एवं सूखे से पड़ने वाले प्रभाव;

वनों का ह्रास; खाद्यान्न चारा और पेयजल का नितान्त अभाव; नियोजित आर्थिक विकास में बाधा; ऋण-ग्रस्तता व बेरोजगारी में अभिवृद्धि; स्वास्थ व कुपोषण की समस्या का उत्पन्न हो जाना; महंगाई का बढ़ जाना; उद्योगों (मुख्यत: कृषि, आधारित उद्योग) का प्रभावित होना; श्रमिकों की कार्यक्षमता में कमी और जनता की क्रय शक्ति में ह्रास हैं।

समस्या के समाधान के प्रयास

अकाल का भौगोलिक और सामाजिक स्वरूप होने के साथ ही राजनैतिक स्वरूप भी हैं। स्वार्थी प्रबल होते हैं; अवांछित लाभ अर्जित करना चाहते हैं। अकाल में ऊंची आवाजें प्राय: उन लोगों की होती हैं, जो अकाल के नाम पर अनैतिक मार्गों से करोड़ों रुपये डकारते हैं । अकाल की आशा लगाने वालों में स्वार्थी व्यक्ति व संस्थाएं होती हैं। वर्ष 1991-1992 में अकाल घोषित न किया जाना उपरोक्त व्यक्तियों व संस्थाओ की आशाओं पर वज्रपात है । ये व्यक्ति दबी और निराशाभरी जबान से पूछते

हैं ''क्या इस वर्ष भी राजस्थान में अकाल नही पड़ेगा।''

अकाल के समय पशुधन को बचाने के लिए चारा मंगाने व चारा वितरण करने वाले संगठन अकाल के कारण पशुओं की दुर्दशा की आवाज उठाते हैं और प्रतिफल के रूप में अनुदान की मोटी रकम वसूल करते हैं।

अमंगल की इस स्थिति मे स्वमंगल चाहने वाले लोग किस मंशा से ऐसा करते हैं और उनका उद्धेश्य क्या होता है, इसका विश्लेषण करने के लिए पहले सरकारी विभागों व संगठनों को लिया जाए कि वे अकाल की कामना क्यों करते हैं? तथा इमानदारी पूर्वक अपने दायित्व का निर्वाह क्यों नहीं करते ?

उपरोक्त संदर्भ में प्रश्न यह उठता है कि कब तक ये लोग राज्य को अकालग्रस्त रखना चाहते हैं। अब इस समस्या पर सकारात्मक रूप से विचार करने का समय आ गया है। अकाल के नाम पर चलने वाली दुकानों को बन्द किया जाना चाहिए। इस कार्य में धन के दुरुपयोग को रोका जाना चाहिए। धन का हस्तान्तरण एक विभाग से दूसरे विभाग को और एक संस्था से दूसरी संस्था को इस प्रकार होता है कि केवल धन खर्च होने की रिपोर्ट ही सरकार को प्राप्त होती हैं। उसके लिए निम्न मुद्दों पर गौर करना आवश्यक है:-

(1)अकाल के समय संबंधित विभागों द्वारा पूर्व में स्वीकृत और निर्माणाधीन कामों को ही किया जाना चाहिए।

(2)पेयजल की व्यवस्था जिन स्थानों पर उपलब्ध कराई गई है, वहां पेयजल स्रोत पहले से ही गहरे रखे जाने चाहिए ताकि थोड़े जलस्तर की कमी से ये अनुपयोगी न हो जाएं।

(3)डेयरी फेडरेशन व सहकारिता विभागों द्वारा राज्य में चल रहे पशु आहार संयंत्रो द्वारा ही चारे की नियमित आपूर्ति करनी चाहिए। स्वंयसेवी संगठनों के कामों की निगरानी रखी जानी चाहिए। जाली धन्धा करने वाली संस्थाओं को सदैव के लिए इस कार्य के अयोग्य कर देना चाहिऐ।

(4)सरकार द्वारा व्यवस्थित कार्यक्रमों का पर्याप्त प्रचार करना चाहिए तथा नियमित अकाल के काम एक समान सूची से चलाने चाहिए। अकालग्रस्त व अकाल से आशंकित क्षेत्रों में पहले से ही प्रयास किए जाने चाहिए ताकि बाद में जल्दबाजी में कार्य न निपटाने पड़ें।

(5)अकाल राहत कार्यों में संलग्न लोगों के मस्टर रोलों को जनसाधरण की जांच हेतु उपलब्ध रखने की व्यवस्था होनी चाहिए ताकि बेईमानी व जालसाजी में लिप्त तत्व मनमानी न कर सकें।

(6) निर्माण कार्यों को पहले से चिन्हित कर लिया जाना चाहिए और उनकी लागत के अनुमान एक स्वीकृत मानदंड के अनुसार होने चाहिए।

(7)अकाल व सूखे से संबंधित शिकायतों व सुझावों को सरकार द्वारा प्राथमिकता के आधार पर निपटाना जाना चाहिए। इसके लिए एक अलग सरकारी तंत्र काम मे लिया जाना अपेक्षित है। इस तंत्र में राज्य के योग्य व अत्यन्त ईमानदार अधिकारी रखे जाने चाहिए।

(8)वनों की कटाई पर कड़ा प्रतिबंध लगाना चाहिए। अधिकाधिक वृक्षारोपण हेतु किसानों को मुफ्त पौधे वितरित किए जाने चाहिए।

(9) निजी संस्थाओं, धार्मिक संगठनों को इस भागीरथ कार्यों में सहयोग हेतु आमंत्रित किया जाना चाहिए।

(10) सुलभ जल संसाधनों का प्रबन्धन तथा सन्तुलित व्यय इस समस्या के समाधान के लिए दूसरा उपाय हो सकता है।

(11) अन्तरिक्ष सर्वेक्षण से उन क्षेत्रों का पता लगाया जाए जहां पर जल की मात्रा अपेक्षाकृत अधिक हो तथा जलस्तर उन्नत हो, थार मरुस्थल के नीचे काफी जल है।

अन्य सुझाव

सूखे से निपटने के लिए केन्द्र सरकार को अधिकाधिक आर्थिक मदद देनी चाहिए।

राज्य के पश्चिमी जिलों में सूखा सम्भाव्य क्षेत्र कार्यक्रम डीपीएपी क्रियान्वित किया जाए।

सूखा समस्या के दीर्घकालीन समाधान हेतु वैज्ञानिकों व अर्थशास्त्रियों का सहयोग लेना चाहिए।

राज्य में फसल बीमा योजना को सख्ती से लागू किया जाए।

अधिकाधिक बांध निर्माण, नहर निर्माण, जलकूप, तालाब की खुदाई कर जल उपलब्धि के प्रयास किए जाएं।

सार्वजनिक स्थलों पर पानी के अनावश्यक कार्य व रिसाव को रोका जाना चाहिए।

जनता का सहयोग लिया जाना चाहिए।

उपर्युक्त प्रयासों व सुझावों द्वारा इस समस्या पर शीघ्र नियंत्रण पाकर ही हम इस मरुभूमि को लहलहाते मैदानों के रूप में देखने का स्वप्न साकार कर सकते हैं, अन्यथा हमारे सारे प्रयास व कार्य सूखा व अकाल रूपी दैत्य के दास बनकर रह जायेगें।

राजकीय कला महाविद्यालय,
अलवर-301001 राजस्थान

उचित दर की दुकान द्वारा खाद्यान्न वितरण

आर.एन./708/57
डाक-तार पंजीकरण संख्या : डी (डी एन) 98
पूर्व भुगतान के बिना एन.डी.पी.एस.ओ., नई दिल्ली में डाक में डालने की अनुमति (लाइसेंस) : यू (डी एन)-55

RN/708
P & T Regd. No. D
Licenced under U (D)-5
to post without pre-payment at NDPSO, New De

डा. श्याम सिंह शशि, निदेशक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाऊस, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित और